भव्य सत्वोपकारकः, ब्रह्मचारी जितेन्द्रियः ॥
प्राचीन जीर्णोद्धारकः, जयति नीतिसूरिशः ॥ १ ॥

समर्पित

जैनेन्द्रागम रागमत्तमनसां
सूरिश्वगणां वरः ।
शान्त्यादि प्रथितोत्तमबहुगुण
ग्रामाश्रय सुन्दरः ॥
तीर्थोद्धार परायणो गुणिगणैः
शिष्यैःप्रशिष्यैर्वृतो ।
जैनाचार्यशिरोमणि विजयतां,
श्रीनीतिसूरिश्वरः ॥१॥

के

कर कमल में सादर समर्पित

प्रकाशक

धन्यवाद

श्रीमती बाई जासुद शेठ जीवाभाई पीतांबरदास लुहारकी पोल अहमदाबादने इस पुस्तककी दोसौ नकल लेकर प्रकाशनमे सहायता दी है एतदर्थ धन्यवाद.

प्रकाशक.

प्रस्तावना

ऋषिमंडल स्तोत्र-भावार्थ, यंत्र, आम्ना, आराधना, मंत्रभेद सकलीकरण, उत्तरक्रिया, विधिविधान, ध्यानस्मरण, पूजा, आदि विषय सहित पाठकोंके हाथमें है। इस पुस्तकमें जहां तक हो सका है स्पष्टीकरण किया गया है। फिरभी मंत्रशास्त्र जैसे विषयमें मैं निष्णांत नही हूं, इसलिये त्रुटियां रहजाना सम्भव है। मंत्रका विषय मामूली वात नहीं है, इस विषयमेंतो जो निपुण होते हैं वही इसका सम्पूर्ण भेद पा सकते हैं। मेरेमें इतनी योग्यता नहीं है, लेकिन ज्ञानी-योंकी कृपासे जो कुछ संग्रह कर पाया हूं वही पाठकोंके सामने है, इसमे मेरा कुछभी नही है, जो कुछ आप देखेंगे पूर्वाचार्योंकी कृतियोंसे उद्धृत किया हुवा पावेंगे, साथही उन पूर्वाचार्योंका कि जिनको कृत्तियोंमेंसे वयान लिया गया है उनका व उन पुस्तकोंके प्रकाशकोंका आभार मानता हूं।

वर्तमानकी समाजमें मंत्रशक्तिपर विश्वास और अविश्वास करने वाले कम नहीं हैं। साथही मंत्रबलके प्रभावसे कठिन कार्योंकी सिद्धि हो जानेके उदाहरणभी बहुतायतसे प्राप्त होते हैं, जिनको देखते मंत्रबलके लिये किसी तरहकी शंका नही रहती।

मंत्रोके रचियता महापुरुष बहुत सामर्थ्यवान होते हैं, और उनकी रचनामें विशिष्ट प्रकारकी सिद्धियां समाई हुई होती हैं। जिनके प्रभावसे मंत्रके अधिष्ठाता देव कार्यको पूर्तीमें सहायक होते हैं, और इस विषयके बहुतसे उदाहरण शास्त्रोंमें बताये हैं।

मंत्रसिद्ध करनेवाले पुरुषको छंद पद्धति राग आलाप पदच्छेद शुद्धता पूर्वक उच्चार आदिपर पूरा लक्ष देना चाहिए। जो मनुष्य एकाग्रमनसे ध्यान करते हैं, उन्हे अवश्य सिद्धि प्राप्त होती है, मंत्रबलसे कठिन समस्या भी शीघ्र हल हो जाती है। मंत्रआराधन करनेवालेंको खयाल रखना चाहिए कि पुङ्गी बजानेसे सांप आता है, लेकिन हारमोनियम, सीतार, सारंगी, आदिके बजानेसे सर्प नही आता। जहां पुङ्गी बजीके बिलमेंसेही मस्त होते हुवे फणको फैलाकर मस्तीमें आये हुवे नागराज फोरन पुङ्गीके सामने आखडे होते हैं। इसी तरह मंत्र-स्तोत्रके लिये भी समझना चाहिए। यदिक्रिया शुद्ध है उच्चारभी यथोचित है तो सिद्धिमेंभी विलम्ब नही है।

इस पुस्तकमें लगभग उनचालीस विषयोंपर प्रकाश डाला है, और मंत्र यंत्र आम्ना विधिके लिये पृथक पृथक प्रकरण बनाकर समझनेमें सुविधायें की गइ हैं। ऋषिमंडल मंत्र यंत्रको समझनेके लिए इस पुस्तकमें प्रथम ऋषिमंडल मंत्र महिमा बताकर ऋषिमंडल मूल पाठ दिया गया है। बादमें मूल पाठको भावार्थ सहित बताकर ऋषिमंडल यंत्र बनानेकी तरकीबका बयान कर पदस्थ ध्यानका कुछ वर्णन किया गया है, और मायाबीज (ह्रीं) को मायाबीज सिद्ध करनेके

लिए (ह्रीं) अक्षरके पांच विभाग बनाकर सचित्र बताया गया है और इन पांचों विभागोंसे स्वर व्यंजन अक्षरकी योजनाका बयान करके सकलीकरणका वर्णन कर रक्षामंत्रका उल्लेख किया गया है, फिर ऋषिमंडल मंत्रभेद, ऋषिमंडल आम्ना, विशेषचार, पूजा याने उत्तरक्रिया, आवर्त और मालाविचारको बताकर पुस्तक सम्पूर्ण की गई है।

चित्र संख्या लगभग आठ है जो दर्शन योग्य है और पुस्तककी महिमाको बढानेवाले व ऋषिमंडल स्तोत्र-यंत्र-मंत्रकी आराधनामें उपयोगी समझ तीन कलरके व सादे रंगबरंगी दिये गये हैं सो पाठक देख लेवें।

पुस्तकके प्रकाशनमें शुद्धताका बहुत ध्यान रखते हुवे भी अशुद्धियां रह जाती हैं, और इस तरह रह जानेके कई कारण होते हैं जो प्रकाशन कार्य करानेवालोंसे छिपे हुवे नहीं हैं एतदर्थ अशुद्धियोंके लिये पाठक क्षमाकर सुधार कर पढ़ें और इस पुस्तकमें बताये हुवे विधानका लाभ लेकर कृतार्थ करें। इति—

मुं० अहमदाबाद
भाद्रपद शुक्ला १५
सम्वत् १९९६
ता २८-९-१९३९

भवदीय–
चंदनमल नागोरी
छोटीसादडी (मेवाड)

अनुक्रमणिका

चित्रसूची

प्रथम ग्राहक बनने वालोंके नाम

नकल	नाम
२००	बाई जासूद सेठ जीवाभाई पीतांबरदास के सुपुत्री लुहारका पोल अहमदावाद
२५	वकील जेसींगभाई पोचाभाई अहमदावाद
७	सेठ रायचंदभाई साणंदवाले
७	घीया बुद्धाभाई पुरुषोत्तमभाई अहमदावाद
५	सेठ अमीचंदजी कास्टिया भोपाल
१	पन्यासजी महाराज हिम्मतविजयजी, घाणेराव
१	जी. एन. बीजानी इलेक्ट्रीक इन्सपेक्टर बंबई
१	आचार्य महाराज ऋद्धिमुनिजी बम्बई
१	लाला रामप्रसाद किशोरीलाल मालेरीजैन मलेरकोटला
१	सेठ गुलाबचंदजी जोधाजी, मु. बनशा पो० नागोठणां
१	बाबूलालजा हीरालालजी झवेरी आबुरोड
१	सेठ रतनलालजी चांदमलजी कोचर मु धमतरी (रायपुर)
१	सेठ श्रीचंदजा तेजमलजी पारख मु. धमतरी ,,
१	सिंघीजी जेठमलजा, वनेचंदजी मु. सिथाना (सिरोही)
१	सेठ पोपटलाल कसलचंद शाह मु. पालियाद (बोटाद)
१	श्रीमती राजकुंवरबाई किशनगढ
१	सेठ कालूजी किशनलालजी मंदसोर
१	सेठ किशनलालजी रतनदासजी मंदसोर

१ सेठ कुन्दनजी फूलचंदजी संगवी मंदसोर
१ सेठ नगजीरामजी केशरीमलजी मंदसोर
१ सेठ भगुभाई हरजीवनदास वजारगेट बम्बई
२ रा. रा. महालकारी साहेब अमीचंदभाई, सुलतानपुर
१ थानेदार साहब. सरपाडा (मेवाड)
१ सेठ कांतिलाल सोमचंद धांगध्रा
१ बाबू लाधूरामजी जौहरी ऑडीट ऑफीस अजमेर
१ जैन ज्ञानभंडार सिवाणा मारफत, स्थानकवासी पुज्यश्री रघुनाथजी, ज्ञानचंदजी स्वामी व खुशालचंदजी
१ सेठ अमृतलाल छगनलाल राधनपुर
१ श्री शांतिचंद्र सेवामंडल हाजापटेल पोल अहमदाबाद
१ सेठ जमनादास सुरजमल, शांतिनाथकी पोल ,,
१ सेठ चीमनलाल मगनलाल, दोशीवाडा अहमदाबाद
२ एक श्रावक राधनपुर

॥ ॐ ॥

ऋषि मंडल

स्तोत्र–मंत्र–महिमा

ऋषि मंडल स्तोत्र की महिमा पारावार है। श्रद्धावान मनुष्य इस स्तोत्र का पाठ बहुत प्रेमसे करता है। मुख्यतया इस स्तोत्र में "ह्रीं" का ध्यान आता है, और "ह्रीं" में चौबीस जिनेश्वर भगवान की स्थापना बताकर ध्यान करना बताया है, जिसका विवरण स्तोत्र के भावार्थ से स्पष्ट सिद्ध हो जाता है।

इस स्तोत्र की रचना के बाबत इस स्तोत्र के गुनचासवें श्लोक से सिद्ध होता है कि इस स्तोत्र के प्रणेता श्री तीर्थङ्कर भगवान हैं, और इस की सङ्कलना गणधर गौतम स्वामी महाराजने की है।

इस स्तोत्र के भावार्थ में ही मूल मंत्र गर्भित निकलता है, और इस स्तोत्र की आम्ना याने विधि भी भावार्थ से निकलती है। इस स्तोत्र में मंत्राक्षर, बीजाक्षर, भरे हुवे हैं, जिनको ठीक तरह समझ कर इस स्तोत्र का नित्य पाठ किया जाय व मंत्र का ध्यान किया जाय तो अवश्य फलदाई होता

ऋषि मंडल मूल मंत्र

ॐ ह्राँ ह्रीँ ह्रुँ ह्रूँ

ह्रेँ ह्रैँ ह्रौँ ह्रँ: असिआउसा

सम्यग्दर्शन ज्ञान

चारित्रेभ्यो ह्रीँ नमः ॥

卐

है। इस स्तोत्र में "ह्रीं" को मुख्य माना गया है जिसका वर्णन करते कहा है कि,

ध्यायेत्सिताब्जं वक्त्रान्तरष्टवर्गींदलाष्टको ॥
ॐ नमो अरिहंताणमिति वर्णानमिक्रमात ॥१॥

भावार्थ—मुख के अन्दर आठ कमल वाले श्वेत कमल का चिंतवन करे, और उसके आठों कमल में अनुक्रम से "ॐ नमो अरिहन्ताणं" के आठों अक्षरों को एक एक कमल में अनुक्रम से स्थापित करे। कमल के भाग की केसरा पंक्ति को स्वरमय बनावे, और इन कमलों की कर्णिका को अमृत विंदु से विभुषित करे, उन कर्णिकाओं में से चन्द्रविम्ब से गिरते हुवे मुख कलम से सञ्चारित प्रभामंडल के मध्यमें विराजित चंद्र जैसे कान्ति वाले माया बीज "ह्रीं" का चिंतवन करे। इस तरह चिंतवन करने के बाद कमल के पुष्प के पत्तों में भ्रमण करते आकाश तल से सञ्चारित मन की मलीनता का नाश करते हुवे अमृत रस से झरते और तालुरन्ध्र से निकलते हुवे भ्रकुटी के मध्य में शोभायमान तीनलोक में अचिंतनीय महात्म्य वाले तेजोमय की तरह अद्भुत एसे इस "ह्रीं" का ध्यान किया जाय तो एकाग्रता पूर्वक लय लगाने वाले को वचन और मनकी मलीनता दूर करने पर श्रुत ज्ञान का प्रकाश होता है।

उपर लिखे अनुसार जो कोई इस तरह का ध्यान छे महिने तक कर लेता है, उसके मुखमें से धूम्र की शिखाऐं निकलती हुई वह खुद देखता है। इसी तरह एक वर्ष पर्यन्त अभ्यास किया जाय तो वह पुरुष उसी के मुखमें से ज्वालायें निकलती हुई देखता है। इस तरह ज्वालायें देख लेने बाद सतत् अभ्यास बढाते बढाते वह पुरुष इस कोटी तक पहुंच जाता है कि, उस पुरुष को अत्यन्त महात्म्य वाले कल्याण-कारी अतिशयवान भामण्डल के मध्यमें विराजित साक्षात् सर्वज्ञ भगवान के दर्शन होते हैं।

इस तरह परमात्मा के दर्शन हो जाने बाद इसी ध्यान को स्थिरता पूर्वक एकाग्रमन होकर निश्चय रुपसे लय लगाता रहे तो परिणाम की धारा एसी चढ जाती है के उस मनुष्य के निकट मुक्ति मोक्ष सुख उपस्थित होते हैं, और वह पुरुष परम पद पाता है।

ह्रीं की महिमा अपरम्पार है, और यह ऋषि मंडल का मूल बीज है, इसकी महिमा को समझ कर ऋषि मंडल के मूल मंत्र को श्रद्धापूर्वक सीख लेना चाहिये।

आस्तिक पुरुषों को मंत्र विधान पर बहुत श्रद्धा होती है, जिसका स्पष्टीकरण करते हुवे "अनुभव सिद्ध मंत्र द्वात्रिंशिका, और योगशास्त्र" आदि ग्रन्थों में बहुत विवेचन किया

गया है। मंत्र उपर सम्पूर्ण श्रद्धा रखने वाले और मंत्र को नहीं मानने वाले दोनो आधुनिक कालमे मोजूद हैं, लेकिन मंत्र वक, मंत्र शक्ति, मंत्र प्रभाव के वहुत से एसे प्रमाण मिलते हैं कि इस विषय में स्वभाविक श्रद्धा मनुष्य को हो जाती है, और मंत्र प्रभाव से याने मंत्र का सिद्ध कर के वहुत सी व्यक्तियोंने विजय पाई हैं।

मंत्र अर्थात् अमुक अक्षरों की अमुक प्रकार की सङ्कलना। एसी सङ्कलना से परिस्थिति पर विशिष्ट असर होती है, और कई विद्वानो का एसा कथन है। उदाहरण भी है कि, मंत्र पर श्रद्धा रखने वाले पुरुष गारुडी मंत्र जिसके प्रभाव से झहर उतर जाता है, और मंत्र वल से काट कर भग जाने वाला सांप भी मंत्र के आधीन हो तत्काल गारुडी की शरण में आता है। इस उदाहरण से समझ सकते हैं कि मंत्र कितने बलवान होते हैं, इसी तरह मंत्र वलसे ही कई तरह के प्रयोग –मंदिर को उडा ले आना उपद्रव–रोग–आदि हटाने के लिए किये गये जिन के दृष्टान्त देखने में आते हैं। इस आधुनिक बुद्धिवाद के जमाने में जिस तरह आकर्षण शील विद्युत और प्रेरक विद्युत के समागम से प्रकाश उत्पन्न होता है। तदनुसार भिन्न भिन्न स्वभाव वाले अक्षरों की यथायोग्य रीत से सङ्कलना होती है तो उसके प्रभाव से किसी अपूर्व शक्ति का प्रादुर्भाव होता है। यह तो निसन्देह सिद्ध है कि महापुरुषों के उच्चारित सामान्य शब्दों में भी अद्भुत सामर्थ्य समाया

हुवा होता है, तो फिर अमुक उद्देष पूर्वक विशिष्ट वर्णोंकी की हुई सङ्कलना का बल तो अजीब प्रकार का हो इस में सन्देह ही क्या है ?

मंत्र पद के रचियता महापुरुष जितने दरजे सत्य संयम के पालने वाले होंगे उतने ही परिणाम में विशिष्टता का सम्भव है। इसी कारण मंत्र को भाषा में परिवर्तन किया जाय, या तद्गत अर्थ अन्य भाषा-छंद-पद्धति द्वारा कथित किया जाय तो वह किया हुवा परिवर्तन मंत्र की गरज को पूरी नहीं कर सकता। एसा परिवर्तन तो सामान्यतः अर्थ-भावार्थ समझने व श्रद्धा को विशेष मजबूत बनाने के हेतु से होता है।

मंत्र का ध्यान करने वाले पुरुष को चाहिये कि वह जिस मंत्र का आराधन करना चाहता है उस मंत्र का यथार्थ स्वरूप समझ लेवे और उसकी शक्ति का प्रभाव स्मरण पट पर खड़ा करने के लिये मानसिक विशुद्धि क्रिया की तरफ पूरा लक्ष रखे। मंत्र के अधिष्ठाता कोई भी देव हो या देवी हो उनका नाम लेते ही उनका मूर्तिमंत स्वरूप स्मृति मे आ कर खड़ा हो जाना चाहिये। उनका सारा वृतान्त उन के गुण उन की महिमा का स्मरण सामने ही खड़ा हो जाय इस तरह ध्यानमग्न होते हैं उन पुरुषों को देव-देवी के साक्षात् दर्शन होते हैं और अपूर्व लाभ मिलता है।

मंत्र के अधिष्टायक देव निज के भक्तोंको कष्ट दूर करने के हेतु किस प्रकार सहायक हुवे हैं, और होते हैं एसे वृत्तान्त को भी जानने की आवश्यक्ता है। देव–देवी की अपार शक्ति और निजकी क्षुद्रता को पूरी तरह लक्ष में रखना चाहिये। आराधन करने वाले पुरुष का कर्तव्य है कि वह मंत्राधिष्ठिह देव–देवी की अपार दया व प्रेम से द्रवित होकर उस के पुनित स्वरूप में तन्मय हो जाने की चेष्टा करे। इस तरह की तन्मयता से सिद्धी प्राप्त करने में सहायता मिलती है।

यह वात तो भलि भांति समझ में आ गई होगी कि मंत्र की रचना मर्यादित अंक में मर्यादित अक्षर में विशिष्ट पद्धति अनुसार मंत्रशास्त्र शक्ति के विशारद अनुभवी महात्माओं द्वारा रचित होती हैं। जिसका हेतु वहुत गहन होता है, और मंत्र शास्त्र के नियमानुसार अक्षरों का मीलान संयुक्ताक्षर, द्वाक्षरी, त्रितियाक्षरी, चतुराक्षरी, पञ्चाक्षरी, षष्ठाक्षरी, सप्ताक्षरी, अष्टाक्षरी, और नवाक्षरी तक किया हुवा होता है। इसी लिये एसे महान मंत्रों का जाप वारम्वार करने से सिद्ध हो जाता है। जिसका फल अमोघ अर्थात् महान लाभदाई वताया है, अतः एसे महान मंत्र का विशेष पद्धति सहित जप–ध्यान किया जाय तो विशेष फलदाई होता है।

जिन लोगोंको मंत्र पर श्रद्धा नही हैं वह गलती पर हैं,

स्तोत्र शक्तिसे मंत्रशक्ति कइ गुणी बलवान होती है। जैन धर्ममें तो मंत्र महिमाको विशेष महत्व दिया गया है, इसी लिये हरएक क्रियामें ध्यान करनेके लिये "नवकारमंत्र" बताया गया है जिसके कइ भेद हैं जो सविस्तर "श्री नवकार महामंत्र कल्प" नामकी पुस्तकमें प्रकाशित हो चुके हैं।

मंत्र शब्द जिस जगह आता है वहां ध्याता पुरुषको श्रद्धा हो जाती है और वह समझता हैं कि मंत्र है तो कोई अपूर्व शक्तिका समावेश होना चाहिये। मंत्र शास्त्रमें जैनाचार्योंकी निपुणता तो जग प्रसिद्ध है। पूर्वाचार्योंने मंत्रशक्तिका वर्णन करते हुए बहुतसे सूत्र ग्रन्थ प्रतिपादित कर जनताको यह बताया है कि मंत्रबलसे कठिन कार्यभी सिद्ध हो जाते हैं, वैसे सूत्र ग्रन्थोंके नाम इस प्रकार हैं।

(१) अरुणोववाइ सूत्र—इस सूत्रमें अरुणदेवको प्रसन्न करनेका बयान किया गया है।

(२) वरुणोववाई सूत्र—इस सूत्रसे यह सिद्ध कर बताया है कि मंत्रके आराधनसे वरुणदेवता किस तरह प्रसन्न होते हैं।

(३) गुरुलोववाई सूत्र—इसमें यह बताया है कि एकाग्रता पूर्वक इसका पठन करे तो व्यंतरदेव प्रसन्न होते हैं।

(४) धरुणोववाई सूत्र—इसमें यह तरकीब बताई गई है

कि इसका ध्यान एकाग्रता पूर्वक करे तो धरणदेव प्रसन्न होते हैं।

(५) वेसमणोववाई सूत्र—इस में यह प्रतिपादित किया है की ईसका ध्यान करने से वैश्रमणदेव प्रसन्न होते है।

(६) वेलंधरोववाई सूत्र—मे वेलंधरदेवको प्रसन्न करनेका बयान किया है।

(७) दिविदोववाई सूत्र—में यह बताया है कि आराधना करने से देवेन्द्रदेव प्रसन्न होता है।

(८) उट्ठाणसूये—इसमें अजीव प्रकारका वर्णन है और देव को प्रसन्न करनेकी तरकीब बताई है।

(९) समुट्ठाणसुये—इसमें यह बात बताई है कि आराधक पुरुष सौम्यदृष्टि रखकर आराधना करने से गांवके लोक सुखी हो जाते हैं।

(१०) नागपरिया वलियाओ—इस सूत्रमें यह बताया गया है कि आराधन करने से नागकुमारदेव प्रसन्न होते हैं।

(११) आशिविपसूत्र—सांप विचार आदिका बयान किया गया है।

(१२) दिट्ठि विषभाव—इसमें दृष्टिविप सांपोंका सविस्तर वर्णन किया गया है।

इस तरह पूर्वाचार्योंने निजका ज्ञान प्रगट करनेमें किसी तरहकी कमी नहीं की। इसी तरह (१) भक्तामर स्तोत्र, (२) कल्याण मंदिर स्तोत्र, (३) तिजय पहुत. (४) उवसग्ग-हर, (५) ऋषिमंडल, आदि सैंकडो स्तोत्रोंके रचियता जैनाचार्य हैं। एसे स्तोत्रोंमें गर्भित कई प्रकारके मंत्र-यंत्र बताये गये हैं जिनकी महिमा पारावार हैं। इसके अतिरिक्त और भी मंत्र महिमाके कई उदाहरण मिल सकते हैं।

आराधक पुरुषको साधन करनेसे पहले साधककी योग्यता प्राप्त करलेना चाहिये, क्यों की योग्यतासे अधिकार बढता है, अधिकार बढनेसे आत्मगुणकी तरफ लक्ष जाता है, और आत्मनिष्ठा बढनेसे सत्य संयमका भण्डार बनजाता है, फिर मंत्रसिद्ध करनेमें विशेष विलम्ब नहीं होता और साधक पुरुषकी साध्यदृष्टि सिद्ध हो जाती है।

ऋषि मंडल-स्तोत्र

आद्यंताक्षरसंलक्ष्यमक्षरं, व्याप्य यत्स्थितं ॥
अग्निज्वालासमं नाद बिन्दुरेखासमन्वितं ॥ १ ॥
अग्निज्वालासमाक्रान्तं–मनोमलविशोधकं ॥
देदीप्यमानं हृत्पद्मे,–तत्पदं नौमिनिर्मलं ॥ २ ॥
अर्हमित्यक्षरं ब्रह्मवाचकं परमेष्ठिनः ॥
सिद्धचक्रस्य सद्बीजं–सर्वतः प्रणिदध्महे ॥ ३ ॥
ॐ नमोर्हद्भ्य ईशेभ्यः ॐ सिद्धेभ्यो नमोनमः
ॐ नमः सर्वसूरिभ्यः उपाध्यायेभ्य ॐ नमः ॥४॥
ॐ नमः सर्व साधुभ्यः ॐज्ञानेभ्यो नमोनमः ॥
ॐ नमःस्तत्वदृष्टिभ्यश्चारित्रेभ्यस्तु–ॐ नमः ॥५॥
श्रेयसेस्तु श्रियेस्त्वेतदर्हदाद्यष्टकं शुभं ॥
स्थानेष्वष्टसु विन्यस्तं, पृथग्बीज समन्वितं ॥६॥
आद्यं पदे शिखां रक्षेत्, परं रक्षतु मस्तके ॥
तृतीयं रक्षेन्नेत्रे द्वे,–तुर्यं रक्षेच्च नासिकां ॥ ७ ॥

॥ श्री महावीर भगवान ॥

ईश्वरं ब्रह्मसंबुद्धं–बुद्धं सिद्धं मतं–गुरुं ॥
ज्योतीरूपं महादेवं, लोकालोक प्रकाशकं ॥
॥ ऋषिमंडल ॥

[illegible] वर्क्स, अमदावाद

पंचमं तु मुखं रक्षेत्,–षष्टं रक्षेच्च घंटिकां ॥
नाभ्यंतं सतमं रक्षेद्रक्षेत् पादांतमष्टमं ॥ ८ ॥
पूर्वप्रणवतः सांत सरेफो लब्धिपंचखान् ॥
सप्ताष्टदशसूर्यकान्–श्रितो बिन्दुस्वरान् पृथक् ॥९॥
पूज्यनामाक्षरा आद्याः–पंचातोज्ञानदर्शनः ॥
चारित्रेभ्यो नमोमध्ये, ह्रींसांतः समलंकृतः ॥१०॥
ॐ ह्रॉँ ह्रीँ ह्रुँ ह्रूँ ह्रेँ ह्रैँ ह्रौँ ह्रँः अ सि आ उ सा ॥
सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्रेभ्यो नमः (मूलमंत्र)
जम्बूवृक्षधरोद्वीपः–क्षारोदधिसमावृतः ॥
अर्हदाद्यष्टकैरष्ट काष्ठाधिष्ठैरलंकृतः ॥ ११ ॥
तन्मध्यसंगतो मेरुः, कूटलक्षैरलंकृतः, ॥
उच्चैरुच्चैस्तरस्तार, स्तारामंडलमंडितः ॥ १२ ॥
तस्योपरि सकारांतं,–बीजमध्यास्य सर्वगं ॥
नमामि बिंबमार्हंत्यं,–ललाटस्थं निरंजनं ॥ १३ ॥
अक्षयं निर्मलं शांतं, बहुलं जाड्यतोज्झितं ॥
निरीहं निरहङ्कारं, सारं सारतरं घनं ॥ १४ ॥

अनुद्धतं शुभं स्फीतं–सात्विकं–राजसं–मतं॥
तामसं चिरसंबुद्धं,–तैजसं शर्वरीसनं ॥ १५ ॥
साकारं च निराकारं, सरसं विरसं परं ॥
परापरं परातीतं,–परम्पर परापरं ॥ १६ ॥
एकवर्णं द्विवर्णं च, त्रिवर्णं तुर्यवर्णकं, ॥
पञ्चवर्णं महावर्णं, सपरं च परापरं ॥१७॥
सकलं निष्कलं तुष्टं, निवृतं भ्रांतिवर्जितं ॥
निरञ्जनं निराकारं, निर्लेपं वीतसंश्रयं, ॥ १८ ॥
ईश्वरं ब्रह्मसंबुद्धं, बुद्धं सिद्धं मतं–गुरु ॥
ज्योतीरुपं महादेवं, लोकाकोकप्रकाशकं ॥ १९ ॥
अर्हदाख्यस्तु वर्णान्तः सरेफो विन्दु मंडितः
तुर्यस्वरसमायुक्तो, बहुधा नादमालितः ॥ २० ॥
अस्मिन बीजे स्थिताःसर्वे,–ऋषभाद्या जिनोत्तमाः।
वर्णै निर्जैनिर्जैयुक्ता ध्यातव्यास्तत्र संगताः ॥२१॥
नादश्चन्द्रसमाकारो, विन्दुर्नीलसमप्रभः ॥
कलारुणसमासान्तः, स्वर्णाभः सर्वतोमुखः ॥२२॥

शिरःसंलीन ईकारो, विलीनो वर्णतः स्मृतः ॥
वर्णानुसारसंलीनं, तीर्थकृत्मंडलं स्तुमः ॥ २३ ॥

चन्द्रप्रभपुष्पदन्तो, नादस्थितिसमाश्रितो ॥
विन्दुमध्यगतो नेमिसुव्रतो जिनसत्तमो ॥ २४ ॥

पद्मप्रभवासुपुज्यो, कलापदमधिष्ठतो ॥
शिरईस्थितिसंलीनो, पार्श्वमल्लिजिनोत्तमो ॥ २५ ॥

शेषास्तीर्थकृतः सर्वे,–हरस्थाने–नियोजिताः ॥
मायाबीजाक्षरं प्राप्ताश्चतुर्विंशतिरर्हतां ॥ २६ ॥

गतरागद्वेषमोहाः, सर्वपापविवर्जिताः ॥
सर्वदा सर्वकालेषु,–ते भवन्तु जिनोत्तमाः ॥२७॥

देवदेवस्य यच्चक्रं,–तस्य चक्रस्य या प्रभा ॥
तया छादितसर्वांगं,–मा–मां–हिनस्तु डाकिनी २८

देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य–या–प्रभा ॥
तया छादितसर्वांगं,–मा–मां–हिनस्तु राकिनी २९

देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य–या–प्रभा ॥
तया छादितसर्वांगं,–मा–मां–हिनस्तु लाकिनी ३०

देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य–या–प्रभा ॥
तया छादितसर्वांगं,–मा–मां–हिनस्तु काकिनी ३१

देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य–या–प्रभा ॥
तया छादितसर्वांगं, मा–मांहि–नस्तु शाकिनी ३२

देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य–या–प्रभा ॥
तया छादित सर्वांगं,–मा–मां–हिनस्तु हाकिनी ३३

देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य–या–प्रभा ॥
तया छादित सर्वांगं,–मा–मां–हिनस्तु याकिनी ३४

देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य–या–प्रभा ॥
तया छादितसर्वांगं, मा–मां–हिंसंतु पन्नगा ॥३५॥

देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य–या–प्रभा ॥
तया छादित सर्वांगं, मा–मां–हिंसंतु हस्तिनः ३६

देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य–या–प्रभा ॥
तया छादित सर्वांगं, मा–मां–हिंसंतु राक्षसाः ३७

देवदेवस्य यच्चक्रं,–तस्य चक्रस्य–या–प्रभा ॥
तया छादित सर्वांगं, मा–मां–हिंसंतु वन्हयः ३८

देवदेवस्य यच्चक्रं,–तस्य चक्रस्य–या–प्रभा ॥
तया छादित सर्वांगं, मा–मां–हिंसंतु सिंहकाः३९

देवदेवस्य यच्चक्रं,--तस्य चक्रस्य–या–प्रभा ॥
तया छादित सर्वांगं, मा–मां–हिंसंतु दुर्जनाः ४०

देवदेवस्य यच्चक्रं, तस्य चक्रस्य–या--प्रभा ॥
तया छादित सर्वांगं, मा–मां–हिंसंतु भूमिपाः ४१

श्रीगौतमस्य–या–मुद्रा, तस्या–या-भुवि लब्धयः ॥
ताभिरभ्युद्यतज्योतिरर्हः सर्वनिधीश्वरः ॥ ४२ ॥

पातालवासिनो देवाः–देवा–भूपीठवासिनः ॥
स्वर्वासिनोपि–ये देवाः–सर्वेरक्षन्तु–मामितः ४३

येवधिलब्धयो–ये–तु–परमावधिलब्धयः ॥
ते सर्वे मुनयो देवा–मां–संरक्षय सर्वदा ॥४४॥

दुर्जना भूतवेतालाः, पिशाचा मुद्गलास्तथा ॥
ते सर्वेप्युपशाम्यन्तु,–देवदेवप्रभावतः ॥४५॥

ओं ह्रीं श्रीश्च धृतिर्लक्ष्मी,–गौरी चण्डी सरस्वती ।
जयाम्बा विजया नित्या, क्लिन्नाजितामदद्रवा ॥४६॥

कामाक्षा कामवाणा च,-सानंदानंदमालिनी ॥
माया मायाविनी रौद्री,-कला-काली-कलिप्रियाः ४७
एताःसर्वा महादेव्यो,-वर्त्तन्ते-या-जगत्रये ॥
मह्यं सर्वा प्रयच्छन्तु,-कान्ति कीर्ति धृतिं मतिं ४८
दिव्यो गोप्यः स दुःप्राप्याः-श्रीऋषिमंडलस्तवः॥
भाषित स्तीर्थनाथेन,-जगत्राणकृतेनघः ॥ ४९ ॥

रणे राजकुले वन्हौ,-जले दुर्गे गजे हरौ ॥
श्मशाने विपिने घोरे,-स्मृतो रक्षतु मानवं ॥५०॥

राज्यभ्रष्टा निजं राज्यं,-पदभ्रष्टा निजंपदं ॥
लक्ष्मीभ्रष्टा निजां लक्ष्मीं,-प्राप्नुवन्ति-न-संशयः५१

भार्यार्थी लभते भार्या, पुत्रार्थी लभते सुतं,
वित्तार्थी लभते वित्तं, नरः स्मरणमात्रतः ॥५२॥

स्वर्णे रुप्ये पट्टे कांस्ये,-लिखित्वा यस्तु पुज्यते ॥
तस्यैवाष्टमहासिद्धि, गृहे वसति शाश्वती ॥५३॥

भूर्जपत्रे लिखित्वेदं.-गलके मूर्ध्नि-वा-भुजे॥
धारितं सर्वदा दिव्यं-सर्वभीतिविनाशकं ॥५४॥

भूतैः प्रेतैर्ग्रहैर्यक्षैः-पिशाचैर्मुद्गलैर्मलैः ॥
वातपित्तकफोद्रेके, मुच्यते नात्र संशयः ॥ ५५ ॥
भूर्भुवः स्वस्त्रयीपीठ-वर्त्तिनः शाश्वता जिनाः ॥
तैः स्तुतैर्वंदितैर्दृष्टै, र्यत्फलं तत्फलं श्रुतौ ॥५६॥
एतद्गोप्यं महास्तोत्रं,-न देयं-यस्य कस्यचित् ॥
मिथ्यात्ववासिने दत्ते,-बालहत्या पदे पदे ॥५७॥
आचाम्लादितपः कृत्वा, पूजयित्वा जिनावलीं ॥
अष्टसाहस्रिको जापः कार्यस्तत्सिद्धिहेतवे ॥५८॥
शतमष्टोत्तरं प्रात, र्ये पठन्ति दिनेदिने ॥
तेषां-न-व्याधयो देहे,-प्रभवन्ति न चापदः ॥५९॥
अष्टमासावधिं यावत्,-प्रातः प्रातस्तु यः पठेत् ॥
स्तोत्रमेतन्महास्तेजो,-जिनबिंबं स-पश्यति ॥६०॥
दृष्टे सत्यर्हतो बिंबे,-भवेत्सप्तमके ध्रुवं ॥
पदमाप्नोति शुद्धात्मा,-परमानन्दनन्दितः ॥ ६१ ॥
विश्ववंद्यो भवेत् ध्याता,-कल्याणानि च सोश्नुते ॥
गत्वा स्थानं परं सोपि-भूयस्तु-न-निवर्तते ॥६२॥
इदं स्तोत्रं महास्तोत्रं-स्तुतीनामुत्तमं परं ॥
पठनात्स्मरणाज्जापात्-लभ्यते पदमुत्तमं ॥ ६३ ॥

ऋषि मंडल-स्तोत्र-भावार्थ

आद्यंताक्षरसंलक्ष्यमक्षरं, व्याप्य यत्स्थितं ॥
अग्निज्वालासमं नाद विन्दुरेखासमन्वितं ॥ १ ॥

भावार्थ—अक्षरोंके आदिका अक्षर (अ) और अक्षरोंके अंतका अक्षर (ह) इन दोनो अक्षरोंके वीचमें स्वर व्यंजन के सव अक्षर आजाते हैं। इन अक्षरोंको लिखकर अन्ताक्षर (ह) को अग्निज्वाला जो कि रकारमें मानी गई है (र) उसमें मिलाना ओर उसके मस्तक उपर अर्धचन्द्राकार चिन्ह कर विन्दु सहित करना इस तरह करनेसे (अर्हं) वनता है।

अग्निज्वालासमाक्रान्तं—मनोमलविशोधकं ॥
देदीप्यमानं हृत्पद्मे,—तत्पदं नौमिनिर्मलं ॥ २ ॥

भावार्थ—अर्हं शब्द अग्निज्वालाके समान प्रकाशमान है, और मनके मैलको अलग करनेवाला है, जिससे यह देदीपायमान है, अतः एसे परमपद अर्हं को हृदयकमलमें स्थापित कर निर्मल चित्तसे मन वचन कायाकी एकाग्रतासे अर्हं को नमन करता हूं।

अर्हमित्यक्षरं ब्रह्मवाचकं परमेष्ठिनः ॥
सिद्धचक्रस्य सद्बीजं—सर्वतः प्रणिदध्महे ॥ ३ ॥

श्री सिद्धचक्र मंडल

अर्हमित्यक्षरं ब्रह्मवाचकं परमेष्ठिनः ॥
सिद्धचक्रस्य सद्बीजं-सर्वतः प्रणिदध्महे ॥
॥ ऋषिमंडल ॥

भावार्थ—अर्हं शब्द ब्रह्मवाचक है, और पांच परमेष्टि-रूप सिद्धचक्रका सद्बीज है; जिसको सर्व प्रकारसे नमस्कार करता हूं।

ॐ नमोर्हद्भ्य ईशेभ्यः ॐ सिद्धेभ्यो नमोनमः
ॐ नमः सर्वसूरिभ्यः उपाध्यायेभ्य ॐ नमः ॥४॥

भावार्थ—ॐ के साथ श्री अर्हन् भगवान-ईश्वर-सिद्ध भगवान सर्व आचार्य महाराज व उपाध्याय महाराजको वंदन करता हूं।

ॐ नमः सर्व साधुभ्यः ॐज्ञानेभ्यो नमोनमः ॥
ॐ नमःस्तत्त्वदृष्टिभ्यश्चारित्रेभ्यस्तु—ॐ नमः ॥५॥

भावार्थ—सर्व साधू महाराज सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान व तत्त्वदृष्टि वाले सम्यक् चारित्र को वन्दन करता हूं।

श्रेयसेस्तु श्रियेस्त्वेतदर्हदाद्यष्टकं शुभं ॥
स्थानेष्वष्टसु विन्यस्तं, पृथग्बीज समन्वितं ॥६॥

भावार्थ—अर्हन्त आदि आठों पद श्रेयके करने वाले हैं, जिनकी बीजाक्षर सहित आठों दिशामें स्थापना की जाती है, जो कल्याणकारी—सुख सौभाग्य और लक्ष्मी सम्पादन कराने वाले हों।

आद्यं पदं शिखां रक्षेत्, परं रक्षतु मस्तकं ॥
तृतीयं रक्षेन्नेत्रे द्वे,—तुर्यं रक्षेच्च नासिकां ॥ ७ ॥

भावार्थ—पहिला अर्हंत पद शिखाकी रक्षा करो, दूसरा सिद्धपद मस्तक की रक्षा करो, तीसरा आचार्यपद दोनों नेत्रोंकी रक्षा करो, और चौथा उपाध्याय पद नासिकाकी रक्षा करो।

पंचमं तु मुखं रक्षेत्,—षष्टं रक्षेच्च घंटिकां॥
नाभ्यंतं सप्तमं रक्षेद्रक्षेत् पादांतमष्टमं ॥ ८॥

भावार्थ—पांचवां साधूपद मुँहकी रक्षा करो, छठा ज्ञानपद कण्ठकी रक्षा करो, सातवां सम्यग् दर्शनपद नाभिकी रक्षा करो, और आठवां चारित्रपद चरणकी रक्षा करो।

पूर्वप्रणवतः सांत सरेफो लब्धिपंचखान् ॥
सप्ताष्टदशसूर्यंकान्—श्रितो विन्दुस्वरान् पृथक्॥९॥

भावार्थ—प्रथम प्रणव अक्षर ॐ को लिख कर बादमें सकारान्त–अन्त के अक्षर "ह" को रेफ सहित लिखना और उसके उपर स्वराक्षर की मात्रा लगावे, जैसे आ. की मात्रा, ई. की मात्रा, उ. की मात्रा ऊ. की मात्रा, ए. की मात्रा, ऐ. की मात्रा, औ. की मात्रा को, अनुस्वार सहित लिखे और अँ की मात्रा भी लिखे जिस से, ह्राँ. ह्रीँ. ह्रुँ, ह्रूँ. ह्रेँ. ह्रैँ. ह्रौँ. ह्रँः बन जाता है।

पूज्यनामाक्षरा आद्याः-पंचातोज्ञानदर्शनः ॥

चारित्रेभ्यो नमोमध्ये, ह्रींसांतः समलं कृतः ॥१०॥

भावार्थ—बीजाक्षर के बाद पंचपरमेष्टि नामके प्रथम अक्षर अ, सि, आ, उ, सा, लिखे और उनके आगे सम्यग् दर्शन ज्ञान चारित्रेभ्यो नमः लिख कर चारित्रेभ्यो व नमः के बीचमें ह्रीं लिखे, इस तरह लिखनेसे सत्ताइस अक्षरका मूल मंत्र बन जाता है। इस मंत्रके आद्यमें ॐ प्रणव अक्षर लगता है, क्यों कि प्रणव अक्षर शक्तिशाली है, और मंत्रको बलवान बनाने वाला है। इसी कारणसे सत्ताइस अक्षरोंके पहले ॐ लगाना चाहिये, और मंत्र शास्त्रके नियमानुसार इस ॐ अक्षरकी गीनती इस मंत्रके अक्षरोंके साथ नहीं की गई।

जम्बूवृक्षधरोद्वीपः-क्षारोदधिसमावृतः ॥

अर्हदाद्यष्टकैरष्ट काष्टाधिष्टैरलंकृतः ॥ ११ ॥

भावार्थ—जम्बूवृक्ष को धारण करने वाला द्वीप जिस को जम्बूद्वीप कहते हैं। जिसके चारों तरफ लवण समुद्र है, एसा जो जम्बूद्वीप है वह आठों ही दिशा के स्वामी अर्हत् सिद्ध आदि से शोभायमान हो रहा है।

तन्मध्यसंगतो मेरुः, कूटलक्षैरलंकृतः, ॥

उच्चैरुच्चैस्तरस्तार, स्तारामंडलमंडितः ॥ १२ ॥

भावार्थ—उसके मध्यभाग में मेरु पर्वत है और वह कयैक कूटों से शोभायमान हो रहा है, उस मेरुपर्वत के ज्योतिष चन्द्र परिक्रमा देते हैं जिससे और भी शोभायमान है।

तस्योपरि सकारांतं,—बीजमध्यास्य सर्वगं ॥
नमामि विंबमार्हत्यं,—ललाटस्थं निरंजनं ॥१३॥

भावार्थ—मेरु पर्वत के उपर सकारांत बीज अक्षर ह्रीँ की स्थापना करे, और उसमें सर्वज्ञ भगवान जिन्होंने कर्मों को नाश कर दिये हैं, एसे अर्हत् भगवान को ललाट में स्थापित करके वन्दन नमन कर ध्यान करे।

अक्षयं निर्मलं शांतं, बहुलं जाड्यतोज्झितं ॥
निरोहं निरहङ्कारं, सारं सारतरं घनं ॥ १४ ॥

भावार्थ—अर्हत् भगवानका बिंब अक्षय, अर्थात् कर्म-मलसे रहित-निर्मल-शान्तताके विस्तारवाला अज्ञानसे रहित है और जिसमें किसी तरहका अहंकार नही है, एसा श्रेष्ट-अत्यन्त श्रेष्ट बिंब है।

अनुद्धतं शुभं स्फीतं—सात्विकं—राजसं—मतं ॥
तामसं चिरसंबुद्धं,—तैजसं शर्वरीसमं ॥ १५ ॥

भावार्थ—उद्धताई हठवाद से रहित है, शुभ-स्वच्छ-एवंस्फटिक जैसा निर्मल है। चौदहराज लोकके मालिक होनेसे राजस गुणवाला है। आठों कर्ममलका नाश करनेमें

तामसी वृत्तिवाला है, ज्ञानवान तेजवान जिस तरह पूनमके चाँदसे रात्री शोभायमान दीखती है, तदनुसार तेजस्वी अज्ञान-अंधकारका नाश करनेवाला आनन्दकारी जिनबिंब है।

साकारं च निराकारं, सरसं विरसं परं ॥
परापरं परातीतं,-परम्पर परापरं ॥ १६ ॥

भावार्थ—अर्हत् भगवानका बिंब होनेसे साकार है। अर्हत् सिद्धपद पा चुके हैं इस लिये मोक्षकी अपेक्षा निराकारभी है। सम्यग् ज्ञानदर्शनसे परिपूर्ण रसमय हैं, किन्तु रागद्वेपादि रसोंसे रहित हैं, और उत्कृष्ट है।

एकवर्णं द्विवर्णं च, त्रिवर्णं तुर्यवर्णकं, ॥
पञ्चवर्णं महावर्णं, सपरं च परापरं ॥ १७ ॥

भावार्थ—वह एक वर्ण दोवर्ण, तीनवर्ण चारवर्ण और पांचवर्ण वाला अर्थात् श्वेत, लाल, पीला, नीला, और श्यामवर्णवाला है। ह्रीँ बीजाक्षर पांचवर्णवाला है और हकार भी अति श्रेष्ट है।

सकलं निष्कलं तुष्टं, निभृतं भ्रांतिवर्जितं ॥
निरञ्जनं निराकारं, निर्लेपं वीतसंश्रयं, ॥ १८ ॥

भावार्थ—अर्हत् भगवानकी अपेक्षा स-कल अर्थात् शरीर सहित साकार है। निष्कल-अर्थात् सिद्धभगवानकी

अपेक्षा शरीर रहित निरंजन निराकार है, संतोष प्राप्त करानेवाला जिन्होने भवभ्रमणका अंत करदिया है एसे निरंजन निराकांक्षी–जिनको किसी प्रकारकी इच्छा नही है, निर्लेप संशय रहित एसा जिनबिंब है।

ईश्वरं ब्रह्मसंबुद्धं, बुद्धं सिद्धं मतं–गुरु ॥
ज्योतीरुपं महादेवं, लोकालोकप्रकाशकं ॥ १९ ॥

भावार्थ—उपदेश देनेवाले हैं, तीन लोकके नाथ हैं इसलिये ईश्वर हैं। आत्माका स्वरुप बताने वाले हैं इसलिये ब्रह्मरुप हैं, बुद्धरुप हैं, दोष रहित हैं, शुद्ध हैं, ज्योतिरुप हैं, देवोंसे पुजित–महादेव हैं, और लोक अलोकको निजके ज्ञानसे प्रकाशित करनेवाले एसे परमब्रह्म परमात्माका ध्यान करना चाहिए।

अर्हदाख्यस्तु वर्णान्तः सरेफो बिन्दु मंडितः
तुर्यस्वरसमायुक्तो, वहुधा नादमालितः ॥ २० ॥

भावार्थ—अर्ह शब्दका वाचक वर्णके अंतका अक्षर हकार है, और रेफ व बिन्दुसे शोभायमान है, और चौथा अक्षर स्वरका "ई" से अलंकृत है, जिस को मिलानेसे ध्यान करने योग्य "ह्रीँ" अक्षर बनता है।

ह्रीं मे चौवीस जिन स्थापना

अर्हदाख्यस्तु वर्णान्तः सरेफो विन्दु मंडितः ॥
तुर्यस्वरसमायुक्तो, बहुधा नादमालितः ॥
॥ ऋषिमण्डल ॥

वानकी स्थापना अर्धचन्द्राकार जो नादकला है उसमें करना चाहिये । विन्दुके मध्यमें तीर्थंकर नेमिनाथ और मुनिसुव्रत स्वामीकी स्थापना करना ।

पद्मप्रभवासुपुज्यौ, कलापदमधिष्ठतौ ॥
शिरईस्थितिसंलीनौ, पार्श्वमल्लिजिनोत्तमौ ॥ २५ ॥

भावार्थ—पद्मप्रभु और वासुपुज्य स्वामीको मस्तक अर्थात् कलाके स्थानमें स्थापित करना । पार्श्वनाथ व मल्लिनाथ भगवानको "ई" कारमें स्थापित करना ।

शेषास्तीर्थंकृतः सर्वे,–हरस्थाने–नियोजिताः ॥
मायावीजाक्षर प्रासाश्चतुर्विंशतिरर्हतां ॥ २६ ॥

भावार्थ—शेष सोलह तीर्थंकर भगवानको रकार हकार के जो वर्ण हैं, उनके मध्यभागमें लिखें । इस तरह चौवीस जिनदेव माया वीज जो "ह्रीं" कारहैं उसमे स्थापित करे।

गतरागद्वेषमोहाः, सर्वपापविवर्जिताः ॥
सर्वदा सर्वकालेषु,–ते भवन्तु जिनोत्तमाः ॥२७॥

भावार्थ—चौवीसों जिन भगवान रागद्वेष और मोहसे रहित हैं, सर्व प्रकारके पापोंसे वंचित हैं एसे जिन भगवान सर्वदा सर्व कालमें प्राप्त होवें ।

॥ श्री गणधर गौतम स्वामी ॥

श्री गौतमस्य-या-मुद्रा, तस्या-या-भुवि लब्धयः ॥

॥ ऋषिमंडल ॥

अपेक्षा शरीर रहित निरंजन निराकार है, संतोप प्राप्त क
रानेवाला जिन्होने भवभ्रमणका अंत करदिया है ए
निरंजन निराकांक्षी–जिनको किसी प्रकारकी इच्छा नही है
निर्लेप संशय रहित एसा जिनेंबिंब है ।

ईश्वरं ब्रह्मसंबुद्धं, बुद्धं सिद्धं मतं–गुरु ॥
ज्योतीरुपं महादेवं, लोकाकोकप्रकाशकं ॥ १९ ॥

भावार्थ—उपदेश देनेवाले हैं, तीन लोकके नाथ हैं इसलिये ईश्वर हैं। आत्माका स्वरुप बताने वाले हैं इसलिये ब्रह्मरुप हैं, बुद्धरुप हैं, दोप रहित हैं, शुद्ध हैं, ज्योतिरुप हैं, देवोंसे पुजित–महादेव हैं, और लोक अलोकको निजके ज्ञानसे प्रकाशित करनेवाले एसे परमब्रह्म परमात्माका ध्यान करना चाहिए।

अर्हदाख्यस्तु वर्णान्तः सरेफो बिन्दु मंडितः
तुर्यस्वरसमायुक्तो, बहुधा नादमालितः ॥ २० ॥

भावार्थ—अर्ह शब्दका वाचक वर्णके अंतका अक्षर हकार है, और रेफ व बिन्दुसे शोभायमान है, और चौथा अक्षर स्वरका "ई" से अलंकृत है, जिस को मिलानेसे ध्यान करने योग्य "ह्रीँ" अक्षर बनता है।

ह्रीं मे चौवीस जिन स्थापना

अर्हदाख्यस्तु वर्णान्तः सरेफो बिन्दु मंडितः ॥
तुर्यस्वरसमायुक्तो, बहुधा नादमालितः ॥

॥ ऋषिमंडल ॥

अस्मिन बीजे स्थिताःसर्वे,-ऋषभाद्या जिनोत्तमाः।
वर्णैर्निजैर्निजैर्युक्ता ध्यातव्यास्तत्र संगताः ॥२१॥

भावार्थ—इस तरहके "ह्रीँ" बीजा अक्षरमें ऋषभदेव आदि चौवीसही तीर्थंकर विराजे हुवे हैं जो जिस वर्णमें विराजित हैं उस वर्णके अनुसार ध्यान करना चाहिये।

नादश्चन्द्रसमाकारो, बिन्दुर्नीलसमप्रभः॥
कलारुणसमासान्तः, स्वर्णाभः सर्वतोमुखः ॥२२॥
शिरःसंलीन ईकारो, विलीनो वर्णतः स्मृतः॥
वर्णानुसारसंलीनं, तीर्थकृत्मंडलं स्तुमः ॥ २३ ॥

युग्मम्।

भावार्थ—इस बीज अक्षरकी नादकला अर्धचन्द्राकार है, और वह श्वेतवर्णकी होती है, उसमें जो बिन्दु होता है उसका रंग काला है। मस्तककी कला लाल रंगकी होती है, और "ह" कार पीले वर्णवाला है, "ई" कार नीले वर्ण वाला है, इस तरहके "ह्रीँ" में चौवीस तीर्थंकरोंकी रंगके अनुसार स्थापनाकी गई है।

चन्द्रप्रभौपुष्पदन्तौ, नादस्थितिसमाश्रितौ॥
बिन्दुमध्यगतौ नेमिसुव्रतौ जिनसत्तमौ ॥ २४ ॥

भावार्थ—चन्द्रप्रभु और पुष्पदंत इन दोनो तीर्थंकर भग-

वानकी स्थापना अर्धचन्द्राकार जो नादकला है उसमें करन चाहिये। बिन्दुके मध्यमें तीर्थंकर नेमिनाथ और मुनिसुव्र स्वामीकी स्थापना करना।

पद्मप्रभवासुपुज्यौ, कलापदमधिष्ठतौ॥
शिरईस्थितिसंलीनौ, पार्श्वमल्लिजिनोत्तमौ॥ २५॥

भावार्थ—पद्मप्रभु और वासुपुज्य स्वामीको मस्त अर्थात् कलाके स्थानमें स्थापित करना। पार्श्वनाथ व मल्लि नाथ भगवानको "ई" कारमें स्थापित करना।

शेषास्तीर्थंकृतः सर्वे,–हरस्थाने–नियोजिताः॥
मायाबीजाक्षर प्राप्ताश्चतुर्विंशतिरर्हतां ॥ २६॥

भावार्थ—शेष सोलह तीर्थंकर भगवानको रकार हका के जो वर्ण हैं, उनके मध्यभागमें लिखे। इस तरह चौबीस जिनदेव माया बीज जो "ह्रीं" कार हैं उसमे स्थापित करे

गतरागद्वेषमोहाः, सर्वपापविवर्जिताः॥
सर्वदा सर्वकालेषु,–ते भवन्तु जिनोत्तमाः ॥२७।

भावार्थ—चौवीसों जिन भगवान रागद्वेष और मोहसे रहित हैं, सर्व मकारके पापोंसे बंचित हैं एसे जिन भगवान सर्वदा सर्व कालमें माप्त होवें।

॥ श्री गणधर गौतम स्वामी ॥

श्री गोतमस्य–या–मुद्रा, तस्या–या–भुवि लब्धयः ॥

॥ ऋषिमंडल ॥

फोनिक्स प्री वसंत, अमदावाद

वानकी स्थापना अर्धचन्द्राकार जो नादकला है उसमें करना चाहिये। विन्दुके मध्यमें तीर्थंकर नेमिनाथ और मुनिसुव्रत स्वामीकी स्थापना करना।

पद्मप्रभवासुपुज्यौ, कलापदमधिष्ठतौ ॥
शिरईस्थितिसंलीनौ, पार्श्वमल्लिजिनोत्तमौ॥ २५ ॥

भावार्थ—पद्मप्रभु और वासुपुज्य स्वामीको मस्तक अर्थात् कलाके स्थानमें स्थापित करना। पार्श्वनाथ व मल्लिनाथ भगवानको "ई" कारमें स्थापित करना।

शेषास्तीर्थंकृतः सर्वे,–हरस्थाने–नियोजिताः ॥
मायाबीजाक्षर प्राप्ताश्चतुर्विंशतिरर्हतां ॥ २६ ॥

भावार्थ—शेष सोलह तीर्थंकर भगवानको रकार हकार के जो वर्ण हैं, उनके मध्यभागमें लिखे। इस तरह चौबीस जिनदेव माया बीज जो "ह्रीं" कार हैं उसमे स्थापित करे।

गतरागद्वेषमोहाः, सर्वपापविवर्जिताः ॥
सर्वदा सर्वकालेषु,–ते भवन्तु जिनोत्तमाः ॥२७॥

भावार्थ—चौबीसों जिन भगवान रागद्वेष और मोहसे रहित हैं, सर्व प्रकारके पापोंसे वंचित हैं एसे जिन भगवान सर्वदा सर्व कालमें प्राप्त होवें।

देवदेवस्य यच्चक्रं,–तस्य चक्रस्य या प्रभा ॥
तया छादितसर्वांगं,–मा–मां–हिनस्तु डाकिनी २८

भावार्थ—देवोंके भी देव एसे तीर्थंकर भगवान जिनके चक्र अर्थात् समूहकी प्रभासे मेरा शरीर आच्छादित है, अतः मेरे शरीरको डाकिनी किसी प्रकारकी भी पीडा मत करो।

इस तरहके तेरह श्लोक हैं जिनका अर्थ इसी श्लोक के अनुसार है, सिर्फ डाकिनी के नामकी जगह दूसरे नाम आये हैं सो अर्थका विचार करते समझ लेना चाहिए। (२८ से ४१ श्लोक तक)

श्रीगौतमस्य–या–मुद्रा, तस्या–या-भुवि लब्धयः॥
ताभिरभ्युद्यतज्योतिरर्हः सर्वनिधीश्वरः ॥ ४२ ॥

भावार्थ—श्री गौतमस्वामी गणधर महाराज जो लब्धिवानथे, जिनकी लब्धि भूमिपर फैल रही है, जिनकी लब्धिरुप ज्योतिसे भी अत्यन्त प्रकाशमान ज्योति तीर्थंकर भगवानकी है और वह तमाम प्रकारकी निधीका भण्डार है।

पातालवासिनो देवाः–देवा–भूपीठवासिनः ॥
स्वर्वासिनोपि–ये देवाः–सर्वेरक्षन्तु–मामितः ४३

अजिता, (१३) नित्या, (१४) मदद्रवा, (१५) कामांगा, (१६) कामबाणा, (१७) सानंदा, (१८) आनन्दमालिनी, (१९) माया, (२०) मायाविनी, (२१) रौद्री, (२२) कला, (२३) काली, (२४) कलिप्रिया, इस तरह चौवीस देवीयोंके नाम बताये गये हैं।

एताःसर्वा महादेव्यो,—वर्त्तन्ते—या—जगत्रये ॥
मह्यं सर्वा प्रयच्छन्तु,-कान्ति कीर्त्ति घृतिं मतिं ४८

भावार्थ—इस तरह चौवीसही देवीयां जो जैन शासनकी अधिष्ठायिका हैं, और तीन लोकमें जिनका निवास है; वह देवीयां मुझे कान्ति, लक्ष्मी, कीर्ति, धैर्यता, और बुद्धिको प्रदान करे।

दिव्यो गोप्यः स दुःप्राप्याः—श्रीऋषिमंडलस्तवः ॥
भाषित स्तीर्थनाथेन,—जगत्राणकृतेनघः ॥ ४९ ॥

भावार्थ—श्री तीर्थंकर भगवान फरमाते हैं कि, यह ऋषिमंडल स्तोत्र बहुत दिव्य—तेजस्वी है, और बहुत मुश्किलसे मिलता है, इसे गुप्त रखना चाहिये यह जगतकी रक्षा करनेवाला है।

रणे राजकुले वन्हौ,—जले दुर्गे गजे हरौ ॥
श्मशा[illegible] विपिने घोरे,—स्मृतो रक्षतु मानवं ॥५०॥

भावार्थ—पातालमें रहने वाले देव, पृथ्वीपर रहने वाले देव, व्यन्तर व स्वर्गमें रहनेवाले विमानवासी देव सब मेरी रक्षा करो।

येवधिलब्धो–ये–तु–परमावधिलब्धयः ॥
ते सर्वे मुनयो देवा–मां–संरक्षंतु सर्वदा ॥४४॥

भावार्थ—अवधिज्ञान और परमावधि ज्ञानकी लब्धि-वाले सर्व मुनिराज सर्वदा मेरी रक्षा करो।

दुर्जना भूतवेतालाः, पिशाचा मुद्गलास्तथा ॥
ते सर्वेप्युपशाम्यन्तु,–देवदेवप्रभावतः ॥४५॥

भावार्थ—दुर्जन मनुष्य भूत प्रेत वैताल पिशाच राक्षस-दैत्य आदि श्री जिनेश्वर भगवानके प्रसादसे शांत होवें।

ओँ ह्रूँ श्रीँश्च धृतिर्लक्ष्मी,–गोरी चण्डी सरस्वती।
जयाम्बा विजया नित्या, क्लिन्नाजितामदद्रवा ॥४६
कामाङ्गा कामबाणा च,–सानंदानंदमालिनी ॥
माया मायाविनी रौद्री,–कला-काली-कलिप्रियाः४९

भावार्थ—इन दोनो श्लोकोंमें चौवीस देवीयोंके नाम बताये गये हैं। (१) ह्रीँ देवी, (२) श्रीँ देवी, (३) घृति, (४) लक्ष्मी, (५) गौरी, (६) चंडी, (७) सरस्वती, (८) जया, (९) अंबीका, (१०) विजया, (११) क्लिन्ना, (१२)

अजिता, (१३) नित्या, (१४) मदद्रवा, (१५) कामांगा, (१६) कामवाणा, (१७) सानंदा, (१८) आनन्दमालिनी, (१९) माया, (२०) मायाविनी, (२१) रौद्री, (२२) कला, (२३) काली, (२४) कलिमिया, इस तरह चौवीस देवीयोंके नाम वताये गये हैं।

एताःसर्वा महादेव्यो,—वर्त्तन्ते—या—जगत्त्रये ॥
मह्यं सर्वा प्रयच्छन्तु,-कान्ति कीर्त्ति घृतिं मतिं ४८

भावार्थ—इस तरह चौवीसही देवीयां जो जैन शासनकी अधिष्ठायिका हैं, और तीन लोकमें जिनका निवास है; वह देवीयां मुझे कान्ति, लक्ष्मी, कीर्ति, धैर्यता, और बुद्धिको प्रदान करे।

दिव्यो गोप्यः स दुःप्राप्याः—श्रीऋषिमंडलस्तवः॥
भाषित स्तीर्थनाथेन,—जगत्त्राणकृतेनघः ॥ ४९ ॥

भावार्थ—श्री तीर्थंकर भगवान फरमाते हैं कि, यह ऋषिमंडल स्तोत्र वहुत दिव्य—तेजस्वी है, और वहुत मुश्किलसे मिलता है, इसे गुप्त रखना चाहिये यह जगतकी रक्षा करनेवाला है।

रणे राजकुले वन्हौ,—जले दुर्गे गजे हरौ ॥
श्मशाने विपिने घोरे,—स्मृतो रक्षतु मानवं ॥५०॥

भावार्थ—युद्धमें राजदरवारमें अग्निके भयमें जलके उपद्रवमें किलेमें हाथी व सिंह के भयमें स्मशान भूमि निर्जन वनखंड स्थानमे भय प्राप्त हुवा हो वहां इस स्तोत्रमंत्रके स्मरण मात्रसे मनुष्यकी रक्षा होती है।

राज्यभ्रष्टा निजं राज्यं,–पदभ्रष्टा निजंपदं ॥
लक्ष्मीभ्रष्टा निजां लक्ष्मीं,–प्राप्नुवन्ति-न-संशयः५१

भावार्थ—राजपदसे अलग होनेवालेको निजका राजपद, पदवीसे भ्रष्ट होनेवालेको निजकी पदवी, और जिनकी लक्ष्मी चली गई होय ऊन पुरुषोंको निजकी लक्ष्मी प्राप्त होती है इसमें किसी प्रकारका संदेह नही है।

भार्यार्थी लभते भार्या, पुत्रार्थी लभते सुतं,
वित्तार्थी लभते वित्तं, नरः स्मरणमात्रतः ॥५२॥

भावार्थ—स्त्रीके इच्छुकको स्त्री पुत्रकी लालसा वालेको पुत्र, धनके अर्थीको धनकी प्राप्ती इस स्तोत्रके स्मरण मात्रसे हो जाती है।

स्वर्णे रुप्ये पट्टे कांस्ये,–लिखित्वा यस्तु पुज्यते ॥
तस्यैवाष्टमहासिद्धि, गृहे वसति शाश्वती ॥५३॥

भावार्थ—इस ऋषिमंडल स्तोत्रके यंत्रको सोनेके, चांदीके तांबेके अथवा कांसीके पतडे पर लिख कर पुजन

किया करे तो उस मनुष्यके घरमें आठ प्रकारकी सिद्धि हमेशाके लिये निवास करती है ।

भूर्जपत्रे लिखित्वेदं.-गलके मूर्ध्नि-वा-भुजे॥
धारितं सर्वदा दिव्यं-सर्वभीतिविनाशकं ॥ ५४ ॥

भावार्थ-इस स्तोत्रके यंत्रको भोजपत्र पर लिख कर गलेमें या चोटी याने शिखाके बांध देवे या हाथकी भुजाके बांधे तो सर्व प्रकारके भय मिट जाते हैं और आपत्तिका नाश होता है ।

भूतैः प्रेतैर्ग्रहैर्यक्षैः-पिशाचैर्मुद्गलैर्मलैः ॥
वातापित्तकफोद्रेके,-र्मुच्यते नात्र संशयः ॥५५॥

भावार्थ—भूत प्रेत ग्रह गोचर यक्ष पिशाच राक्षस और वात पित्त कफ आदिसे जो पीडा होनेवाली हो उससे बच जाता है इसमें किसी प्रकारका संदेह नही है ।

भूर्भुवः स्वस्त्रयीपीठ-वर्त्तिनः शाश्वता जिनाः ॥
तैः स्तुतैर्वंदितैर्दृष्टै, र्यत्फलं तत्फलं श्रुतौ॥५६॥

भावार्थ—तीनो लोक याने (१) अधोलोक, (२) मध्य लोक, और (३) उर्ध्व लोक एसे तीनो लोकमे जो शाश्वता जिन चैत्य हैं उनकी स्तुति वन्दना आदिसे जो फल मिलता है, उसी तरहका लाभ इस स्तोत्रका पाठ करनेसे होता है ।

एतद्गोप्यं महास्तोत्रं, न देयं यस्य कस्यचित् ॥
मिथ्यात्ववासिने दत्ते, वालहत्या पदे पदे ॥५७॥

भावार्थ—इस स्तोत्रको गुप्त रखना चाहिए, हर एक मनुष्यको नही देवे (योग्यता देखकर देना) मिथ्या दृष्टि-वालेको देनेसे पद पद पर वालहत्याके तुल्य पाप लगता है। (अर्थात् अयोग्य पुरुष इस स्तोत्र-मंत्रकी सिद्धि प्राप्त करे तो अनर्थ आदिका भय रहता है।)

आचाम्लादितपः कृत्वा, पूजयित्वा जिनावलीं ॥
अष्टसाहस्त्रिको जापः कार्यस्तत्सिद्धिहेतवे ॥५८॥

भावार्थ—आयंविलकी तपस्या करके जिनेन्द्र भगवानकी अष्ट द्रव्यसे पूजा करे और इस मंत्रका आठ हजार जाप करे तो कार्य सिद्ध हो जाता है।

शतमष्टोतरं प्रात,—र्ये पठन्ति दिनेदिने ॥
तेषां-न-व्याधयो देहे,—प्रभवन्ति न चापदः ॥५९॥

भावार्थ—जो मनुष्य इस स्तोत्रके मंत्रकी एक माला अर्थात् एकसो आठ जाप नित्य-प्रति प्रातःकालमें करते हैं उनको किसीभी तरहकी व्याधि उत्पन्न नही होती और सारी आपत्तियां टल जाती हैं।

अष्टमासावधिं यावत्,—प्रातः प्रातस्तु यः पठेत् ॥
स्तोत्रमेतत्महांस्तेजो,—जिनविंवं स पश्यति ॥६०॥

भावार्थ—आठ महिने पर्यंत प्रातःकालमे विधि सहित इस स्तोत्रका पाठ करे तो अर्हत् भगवानके बिंबका दर्शन ललाटमें कर लेता है।

दृष्टे सत्यर्हतो बिंबे,—भवेत्ससमके ध्रुवं ॥

पदमाप्नोति शुद्धात्मा,—परमानन्दनन्दितः ॥ ६१ ॥

भावार्थ—इस तरह जिस पुरुषको अर्हन् भगवानके बिंबके दर्शन हो जाते हैं, वह जीव सातवें भवमें मोक्ष पाता है, और मोक्ष स्थान परम आनन्दके देनेवाला है, अर्थात् जन्म जरा मृत्युसे रहित है।

विश्ववंद्यो भवेत् ध्याता,—कल्याणानि च सोश्नुते ॥

गत्वा स्थानं परं सोपि—भूयस्तु—न—निवर्तते ॥६२॥

भावार्थ—संसारके पुजनीय जो ध्याता पुरुष होते हैं उनहीका ध्यान किया जाता है, जो कल्याणके करनेवाला होता है, और जिनके ध्यान मात्रसे मोक्ष मिलती है और संसारका परिभ्रमण मिट जाता है।

इदं स्तोत्रं महास्तोत्रं—स्तुतीनामुत्तमं परं ॥

पठनात्स्मरणाज्जापात्—लभ्यते पदमुत्तमं ॥ ६३ ॥

भावार्थ—यह स्तोत्र साधारण नही है, यह तो महास्तोत्र है, जिसकी स्तुति—स्मरण—पाठ आदि करनेसे उत्तम पदकी प्राप्ती होती है, जिससे मोक्ष सुख मिलता है।

ऋषिमंडल यंत्र बनानेकीतरकीब

ऋषि मंडल यंत्र बनवाना हो तो पहिले अच्छा दिन, शुभ महूर्त देख लेना चाहिए, और जब निजका चन्द्रस्वर चलता हो तब यंत्रको बनानेकी शुरुआत करे। यंत्र सोनेके, चांदीके, तांबेके, कांसीके अथवा सर्व धातुके मिश्रणवाले पतडे पर जैसी जिसकी शक्ति हो तैयार करे।

पतडेको एकसा गोलाकार बनवा कर सफाई वाला करालेवे और बादमें उस पतडे पर जहां तक हो सके अष्ट गंधसे यंत्र लिखे। अष्ट गंध पवित्रतासे बनाया हुवा हो और जिसमें निचे लिखे अनुसार वस्तुओंका मिश्रण होना चाहिए।

(१) केसर, (२) कस्तूरी, (३) अगर, (४) गौरोचन (६) भीमसेमी कपूर (७) चंदन (८) हिंगलु। इन सब को खरलमें तैयार कर लेवे।

जब यंत्र को लिखना शुरु करे तब तेले की तपस्या करना चाहिए। यदि तेला न हो सके तो आँबिलकी तपस्या तो अवश्य करना चाहिए और यंत्र लिखते समय श्री सिद्ध-चक्र मंडलकी स्थापना कर अष्टद्रव्यसे पूजा कर पूर्व दिशाकी तरफ मुख रख कर मौन पने रह कर यंत्र लिखता जाय।

ऋषिमडल
ॐ ह्रीं अर्हद्भ्यो नम
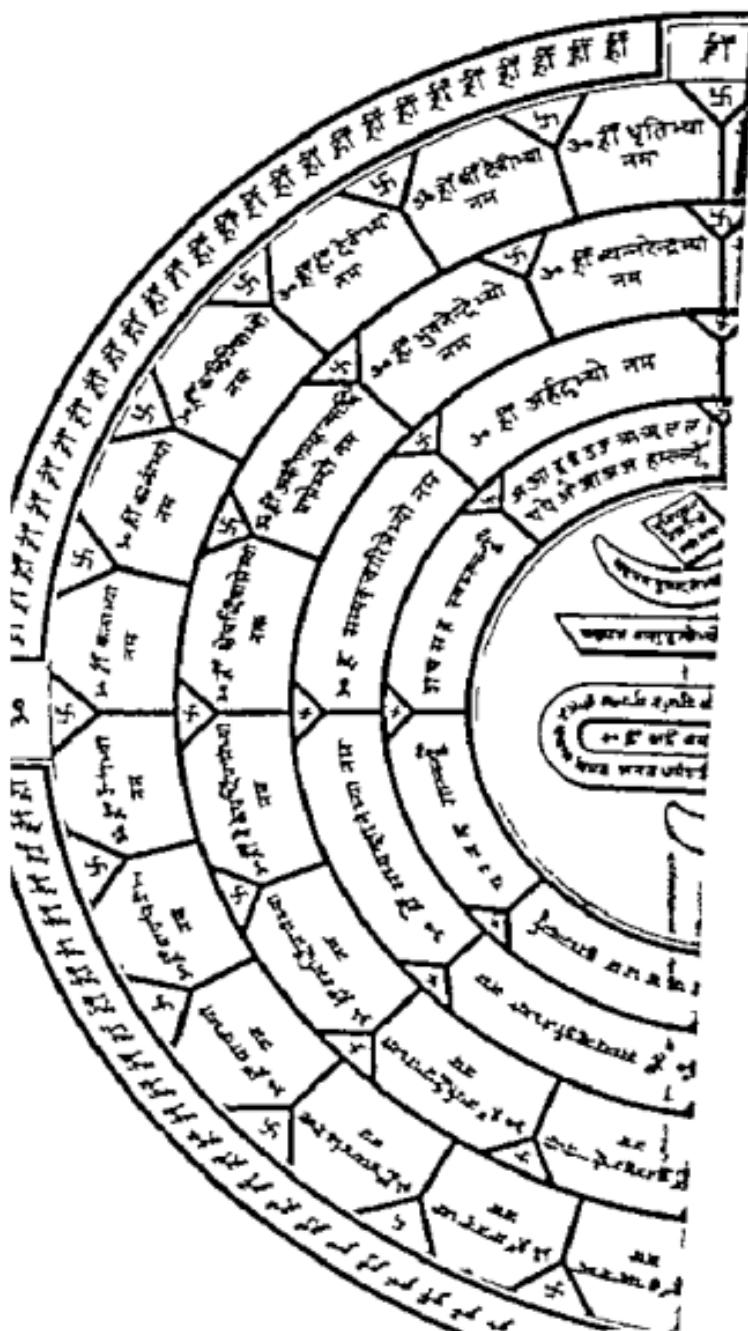
लिखनेकी कलम अथवा निब सोनेका होतो अत्युत्तम है यदि एसी कलम न मिल सके तो बरुकी कलमसे लिखना चाहिए। लोहेके निब-टांकसे नही लिखना चाहिए और जिस कलमसे लिखा जाय वह बिलकुल नई होनी चाहिए।

यंत्र जब तैयार हो जाय तब शुद्धताके लिये ठीक तरह उसका मिलान करलेना चाहिए ताकि ह्रस्व दीर्घ अनुस्वार आदिकी अशुद्धता न रहने पावे। जब निश्चय हो जाय कि यंत्र यथा विधि अनुसार लिखा गया है और किसी प्रकारकी अशुद्धता नही है, एसा निश्चय हो जाने बाद यंत्रके उपर जो अक्षर पंक्ति लिखी गई है उसे मेखसे या टांकलेसे या और कोई अणीदार औजार हो उससे खोद लेवे और एकसा स्पष्ट अक्षर दिखाई दे सके उस तरह तैयार कर लेवे औजार जहां तक हो सके तांबेका लिया जाय यदि एसा न मिल सके तो लोहेका नया औजार काममे लेना चाहिए, इस तरह जब यंत्र शुद्धमान तैयार हो जाय और किसी तरहकी भूल उसमें न रहे तो फिर यंत्रको पूजने योग्य बनानेके हेतु यातो किसी जगह प्रतिष्ठा होती हो वहाँ लेजाकर या स्वयं खर्च कर प्रतिष्ठित करालेवे यदि दोनों बातोंमेसे एकभी न हो सके और साधन करनेकी जल्दी हो तो आत्मार्थी योग्य मुनि महाराजके पास ले जाकर वासक्षेप प्रक्षेप करा लेवे। मुनिराज यदि मंत्र शास्त्रमें निपुण होंगे तो वासक्षेप डालते

समय यंत्रको मंत्रित कर देंगे। सम्भवत् मुनिराजका भी तात्कालिक जोग न मिल सके तो फिर नवपदजी महाराजकी पूजा कराई जावे जिसमे सिद्धचक्र मंडल के पास ऋषिमंडल यंत्र की स्थापना कर पूजा पक्षाल करावे, और वाद में मंत्र को पूजन में रख नित्य पूजा किया करे, और जब कभी प्रतिष्ठा का मौका मिले तब यंत्र की प्रतिष्ठा अवश्य करा लेना चाहिए।

यंत्र को निज के मकान में रख पूजा करना बहुत श्रेष्ट बताया गया है। यदि निज के रहने के निवास स्थान में शुद्धमान जगह अथवा एकान्त आवास जैसी सुविधा न हो तो फिर यंत्र को मंदिरमें रख कर नित्य पक्षाल पूजन किया करे, एसा नित्य प्रति करने से फलदाई होगा और जहां तक हो सके पूजा अष्टद्रव्य से करना चाहिए। अब यंत्र को लिखने की तरकीब बताई जाती है सो ध्यान देकर समझ लेवे।

जब गोलाकार पतडा तैयार हो जाय या चौकोर पतडा रखना हो तो भी रख सकते हैं जिसको इन दोनों आकारमें से जिस आकार का पसंद हो तैयार करा लेने बाद उस के मध्य भाग में पाँच अंगुल लम्बा चौडा गोलाकार चक्र बनावे और उस गोलाकार चक्रमे "ह्रीं" दोहरी लकीर वाला लिखे, दोहरी लकीरें इस तरह से बनाई जावे कि जिनके बीच में चौवीस जिन भगवान के नाम आसानी से लिख सकें। इस तरह "ह्रीं" जब लिख लिया जाय तो फिर नाम लिखने की शुरुआत इस तरीके पर करे।

ह्रीं कार के उपर अर्ध चन्द्राकार जो चिन्ह है वह सफेद कला युक्त माना गया है, क्योंकि चन्द्रकला सफेद होती है इस लिये उसमें श्वेत वर्ण वाले तीर्थङ्कर भगवान का नाम लिखना चाहिए। अतः इस तरह से लिखे।

॥ चंद्रप्रभ पुष्पदंतेभ्यो नमः ॥

इस तरह लिखे बाद चन्द्रकार कला के उपर जो बिन्दु श्याम वर्ण वाला बयान किया गया है इस लिये बिन्दु में श्याम वर्ण वाले तीर्थङ्कर का नाम इस तरह लिखे।

॥ मुनिसुव्रत नेमिनाथेभ्यो नमः ॥

इस तरह लिखे बाद ह्रीं कारके सिरे की लाइन जो मस्तक पर होती है वह लाल वर्ण की बताई गई है इस लिये उसमें लाल वर्ण वाले तीर्थङ्कर का नाम इस तरह लिखे।

॥ पद्मप्रभ वासुपूज्येभ्यो नमः ॥

ऐसा लिख लेने बाद ह्रीं का दीर्घ ईकार याने ई की मात्रा जिसका हरा रंग बताया गया है अतः हरे वर्ण वाले तीर्थङ्कर का नाम इस तरह लिखे।

॥ मल्लि पार्श्वनाथेभ्यो नमः ॥

इस तरह लिख लेने बाद बाकी रहा हुवा ह्रीं कारका विभाग जो हकार रकार है, वह पीले वर्णका बताया है

इस लिये स्वर्ण वाले सोलह तीर्थंङ्कर भगवान के नाम इस तरह लिखे ।

ऋषभ अजित संभव अभिनन्दन
सुमति सुपार्श्व शीतल श्रेयांस
विमल अनंत धर्म शांति कुंथु
अर नमि वर्द्धमानेभ्यो नमः

एसा लिखे बाद पुरा ह्रीँ कार तैयार हो जाता है, बाद में ह्रीँ कार के बीचमे जो जगह रहती है उसमे इस तरह बीज अक्षर लिखना चाहिये ।

॥ ॐ ह्रीँ अर्हं नमः ॥

उपरोक्त कथनानुसार लिखे बाद पूरा ह्रीँ कार तैयार हो गया समझना चाहिए ।

(२) दूसरा गोलाकार ह्रीँ कार के चारों तरफ बनावे जिसमे बरावरी के आठ कोठे रखे उन आठों कोठों में इस तरह लिखना शुरु करे ।

ह्रीँ कार अर्ध चन्द्राकार पर जो बिन्दु है उस के उपर से प्रथम लिखने की शुरुआत करे ।

(१) पहले कोठे में अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः हम्ल्व्र्यूँ ।

(२) दूसरे कोठे में क ख ग घ ङ म्म्ल्व्र्यूँ
(३) तीसरे कोठे में च छ ज झ ञ म्म्ल्व्र्यूँ
(४) चौथे कोठे में ट ठ ड ढ ण र्म्ल्व्र्यूँ
(५) पांचवे कोठे में त थ द ध न घ्म्ल्व्र्यूँ
(६) छट्ठे कोठे में प फ ब भ म झ्म्ल्व्र्यूँ
(७) सातवें कोठे में य र ल व स्म्ल्व्र्यूँ
(८) आठवें कोठे में श ष स ह स्म्म्ल्व्र्यूँ

ऊपर बताये अनुसार आठों कोठों मे लिखे, और साथ ही तीसरा गोलाकार मंडल आठ कोठे वाला बनावे और दूसरे मंडल मे जहां से अ आ इत्यादि लिखा है उसके ऊपर से ही तीसरे मंडल के कोठे में लिखने की शुरुआत करे और आठों कोठे में इस तरह लिखे।

(१) ॐ ह्राँ अर्हद्भ्यो नमः
(२) ॐ ह्रीँ सिद्धेभ्यो नमः
(३) ॐ ह्रूँ आचार्येभ्यो नमः
(४) ॐ ह्रूँ उपाध्यायेभ्यो नमः
(५) ॐ ह्रेँ सर्व साधुभ्यो नमः
(६) ॐ ह्रैँ सम्यग्दर्शनेभ्यो नमः
(७) ॐ ह्रौँ सम्यग्ज्ञानेभ्यो नमः
(८) ॐ ह्रः सम्यक्चारित्रेभ्यो नमः

इस तरह आठों कोठों में लिखने से तीसरा गोलाकार मंडल तैयार हो जाता है। बाद में चौथा गोलाकार मंडल सोलह कोठे वाला बनावे और दूसरे व तीसरे कोठे में प्रथम लिखने की शुरुआत की है उसके ठीक ऊपर से चौथे मंडल मे नम्बर वार इस तरह लिखे।

(१) ॐ ह्रीँ भुवनेन्द्रेभ्यो नमः
(२) ॐ ह्रीँ व्यंतरेन्द्रेभ्यो नमः
(३) ॐ ह्रीँ ज्योतिष्केन्द्रेभ्यो नमः
(४) ॐ ह्रीँ कल्पेन्द्रेभ्यो नमः
(५) ॐ ह्रीँ श्रुतावधिभ्यो नमः
(६) ॐ ह्रीँ देशावधिभ्यो नमः
(७) ॐ ह्रीँ परमावधिभ्यो नमः
(८) ॐ ह्रीँ सर्वावधिभ्यो नमः
(९) ॐ ह्रीँ बुद्धिऋद्धिमाप्तेभ्यो नमः
(१०) ॐ ह्रीँ सर्वौपधिमाप्तेभ्यो नमः
(११) ॐ ह्रीँ अनंतबलर्द्धिमाप्तेभ्यो नमः
(१२) ॐ ह्रीँ तपर्द्धिमाप्तेभ्यो नमः
(१३) ॐ ह्रीँ रसर्द्धिमाप्तेभ्यो नमः
(१४) ॐ ह्रीँ वैक्रेयर्द्धिमाप्तेभ्यो नमः

(१५) ॐ ह्रीँ क्षेत्रर्द्धिप्राप्तेभ्यो नमः

(१६) ॐ ह्रीँ अक्षीणमहानसर्द्धिप्राप्तेभ्यो नमः

इस तरह सोलह कोठों में लिखने बाद चौथा मंडल तैयार हो गया समझना चाहिए।

बाद में इसी चौथे मंडल के पास ही पांचवाँ गोलाकार मंडल चौवीस कोठे वाला बनावे जिस में लिखने की शरुआत अनुक्रम से उपर बताये अनुसार ही करे, और नम्बर वार चौवीस ही कोठों में इस तरह लिखे।

(१) ॐ ह्रीँ ह्रीँदेवीभ्यो नमः

(२) ॐ ह्रीँ श्रीँ देवीभ्यो नमः

(३) ॐ ह्रीँ धृतिभ्यो नमः

(४) ॐ ह्रीँ लक्ष्मीभ्यो नमः

(५) ॐ ह्रीँ गौरीभ्यो नमः

(६) ॐ ह्रीँ चंडीभ्यो नमः

(७) ॐ ह्रीँ सरस्वतीभ्यो नमः

(८) ॐ ह्रीँ जयाभ्यो नमः

(९) ॐ ह्रीँ अंबिकाभ्यो नमः

(१०) ॐ ह्रीँ विजयाभ्यो नमः

(११) ॐ ह्रीँ क्लिन्नाभ्यो नमः
(१२) ॐ ह्रीँ अजिताभ्यो नमः
(१३) ॐ ह्रीँ नित्याभ्यो नमः
(१४) ॐ ह्रीँ मदद्रव्याभ्यो नमः
(१५) ॐ ह्रीँ कामांगाभ्यो नमः
(१६) ॐ ह्रीँ कामवाणाभ्यो नमः
(१७) ॐ ह्रीँ सानंदाभ्यो नमः
(१८) ॐ ह्रीँ आनंद मालिनीभ्यो नमः
(१९) ॐ ह्रीँ मायाभ्यो नमः
(२०) ॐ ह्रीँ मायाविनीभ्यो नमः
(२१) ॐ ह्रीँ रौद्रीभ्यो नमः
(२२) ॐ ह्रीँ कलाभ्यो नमः
(२३) ॐ ह्रीँ कालीभ्यो नमः
(२४) ॐ ह्रीँ कलिप्रियाभ्यो नमः

इस तरह लिखे वाद ऋपिमंडल का पांचवाँ गोलाकार मंडल तैयार हो गया समझियेगा।

वाद में यंत्र के दाहिनी तरफ (ॐ) लिखे और उपर के

भागमे याने सिरे पर तो ह्रीँ लिखे वांई तरफ(क्ष्विँ) और नीचे के भागमे (क्ष) लिखकर यंत्रके चारों तरफ गोलाकार लाइन खेंच कर एकसौ आठ ह्रीँ लिखना जो इस तरह लिखना कि उपर वताये हुवे ॐ, ह्रीँ, क्ष्विँ, और क्षः के बीच में सत्ताइस सत्ताइस ह्रीँ आ सके, इस तरह लिख लेने वाद पूरा ऋषि मंडल यंत्र तैयार हो गया समझियेगा।

इस यंत्र के चारों तरफ लकीरें जैसी के यंत्र के चित्र में वताई गई है खींच कर उनके चारों कोनोमें त्रिशूल का आकार वना कर उसके पास (ल) अक्षर लिखना चाहिए जिससे पृथ्वी मंडल की स्थापना हो जाती है, और यंत्र को सिद्ध करने के लिये इस स्थापना की आवश्यकता है।

एसी स्थापनाऐं और भी चार पाँच तरह की होती है लेकिन सर्व कार्य में यह स्थापना हीश्रेष्ठ मानी गई है अतः इसी तरह स्थापना कर लेवे।

ऋषि मंडल यंत्रमें पदस्थ ध्येय स्वरूप

ऋषिमंडल यंत्र में अक्षरों की योजना और स्वर व्यंजन के साथ संयुक्ताक्षर के मंत्र बीजाक्षरका मिश्रण देख आश्चर्य करने की आवश्यकता नही है। प्राचीन ग्रन्थों में जो बात प्रतिपादित होती है वह विना कारण के नही होती, साधारण बुद्धिवाला मनुष्य ज्यादे अनुभवी न होने से उसे एसा खयाल हो जाता है कि, स्वर व्यंजन के अक्षरों की क्या पूजा बताई? लेकिन इसके प्राचीन प्रमाण बहुत से सम्पादन होते है, उनमें से एक उदाहरण योगशास्त्रका जिसमें श्रीमान् हेमचन्द्राचार्यजी महाराजने पदस्थ ध्येयका स्वरुप बताते कथन किया है उसका संक्षेप से पाठकों के समझने के हेतु यहां उल्लेख करेंगे।

योगशास्त्र में बयान है कि पवित्र पदों का आलम्बन लेकर ध्यान किया जाता है उसीको शास्त्रवेत्ताओंने पदस्थ ध्यान कहा है, जिसका स्वरुप बताया है कि नाभिकमल के उपर सोलह पत्ते वाले कमल के पुष्प का चिंतवन करे, और पत्ते पर भ्रमण करती हुई स्वर की पंक्तिका चिंतवन करना

अर्थात्, अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए, ऐ, ऋ, ॠ, ऌ, ॡ, ओ, औ, अं, अः इस तरह चिंतवन करना बादमें—

हृदयमें स्थापित कमल का पुष्प जिसके चौवीस पत्ते बनाना जिस की कर्णिका सहित पुष्पमें पचीस वर्णाक्षर अनुक्रम से स्थापित करना जैसे, क, ख, ग, घ, ङ, च, छ, ज, झ, ञ, ट, ठ, ड, ढ, ण, त, थ, द, ध, न, प, फ, ब, भ, म तक चिंतवन करना उसके बाद मुखकमलमें आठ पत्तेवाले कमल के अदर बाकी रहे हुये आठ वर्णाक्षर अर्थात्, य, र, ल, व, श, ष, स, ह का चिंतवन करना, इस तरह का चिंतवन करने वाले श्रुत पारगामी हो जाते है, ध्यान करने का अनुभव जिन्होने प्राप्त किया हो उन महापुरषों से एसे ध्यानका स्वरुप समझ कर अभ्यास बढाया जाय तो अवश्य लाभदाई होगा, और जो महापुरुष इस का ज्ञान प्राप्त कर के अनादि सिद्धि वर्णात्मक ध्यान यथाविधि करते रहते हैं उनको अल्प समयमें ही, गया, आया, होनेवाला, जीवन मरण शुभ, अशुभ आदि जानने का ज्ञान उत्पन्न हो जाता है।

दूसरा ध्यान यूं बताया है कि नाभिकमलके नीचे आठ वर्ग के आद्याक्षर जैसे अ, क, च, ट, त, प, य, श आठ पत्तों सहित स्वरकी पक्ति युक्त केसरासहित मनोहर आठ पाखडी वाला कमल चिंतवन करे। तमाम पत्तोंकी सधिया सिद्ध पुरुषों की स्तुति से शोभित करना, और तमाम पत्तों के अग्र

भाग में प्रणवाक्षर व माया बीज अर्थात् (ॐ) (ह्रीँ) से पवित्र बनाना। उन कमल के मध्य में रेफ से (ँ) आक्रान्त कला-बिन्दु (ँ) से रम्य स्फटिक जैसा निर्मल आद्यवर्ण (अ) सहित, अन्त्य वर्णाक्षर (ह) स्थापन करना जिस से (अर्हँ) बनेगा यह पद प्राणमान्त के स्पर्श करनेवाले को पवित्र करता हुवा, ह्रस्व, दीर्घ, प्लुत, सूक्ष्म, और अति सूक्ष्म जैसा उच्चारण होगा। जिसके बाद नाभिकी, कण्ठकी, और हृदयकी, घन्टिकादि ग्रन्थियों को अति सूक्ष्म ध्वनि से विदारण करते हुवे, मध्य-मार्ग से वहन करता हुवा चिन्तवन करना, और विन्दुमें से तप्तकलाद्वारा निकलते दूध जैसे श्वेत अमृत के कल्लोलों से अंतर आत्मा को भीगोता हुवा चिंतवन कर अमृत सरोवर में उत्पन्न होनेवाले सोलह पांखडी के सोलह स्वरवाले कमल के मध्यमें आत्मा को स्थापन कर उसमें सोलह विद्यादेवियों की स्थापना करना।

देदिप्यमान स्फटिक के कुम्भमें से झरते हुवे दुध जैसा श्वेत अमृत से निजको बहुत लम्बे समय से सिंचन हो रहा हो एसा चिंतवन करे।

इस मंत्राधिराज के अभिधेय शुद्ध स्फटिक जैसे निर्मल परमेष्टि अर्हन्त का मस्तक में ध्यान करना, और एसे ध्यान आवेश में "सोऽहं सोऽहं" वारम्वार बोलने से निश्चय रूप से आत्मा की परमात्मा के साथ तन्मयता हो जाती हैं

इस तरहकी तन्मयता होजाने बाद अरागी, अद्वेषी, अमोही, सर्वदर्शी, और देवगण आदि से पूजनीय एसे सच्चिदानन्द परमात्मा समवसरण में धर्मोपदेश करते हों एसी अवस्थाका चिंतवन करना चाहिये, जिससे ध्यानी पुरुष कर्मरहित होकर परमात्मपद पाता है।

महापुरुष, ध्यानी योगी जो इस विषय का विशेष अभ्यास करना चाहते हों वह मंत्राधिप के ऊपर व नीचे रेफ सहित कला और बिन्दु से दबाया हुवा—अनाहत सहित सुवर्ण कमल के मध्यमें विराजित गाढ चंद्र किरणों जैसा निर्मल आकाश से सञ्चरता हुवा दिशाओं को व्याप्त करता हो इस प्रकार चिंतवन करना, और मुखकमल में प्रवेश करता हुवा भ्रकुटी में भ्रमण करता हुवा, नेत्रपत्रों में स्फुरायमान भाल मंडल में स्थिररूप निवास करता हुवा तालू के छिद्रमें से अमृत रस झरता हो, चन्द्र के साथ स्पर्धा करता हो, ज्योतिष मंडल में स्फुरायमान आकाश मंडल में सञ्चार करता हुवा मोक्ष लक्ष्मी के साथ में सम्मलित सर्व अवयवादि से पूर्ण मंत्राधिराज को कुम्भक से चिंतवन करे। जिसका विशेष स्पष्टीकरण करते हुवे कहा है कि "अ" जिसकी आद्यमें है और "ह" जिसके अन्तमें है व बिन्दुसहित रेफ जिसके मध्यमें लगा है एसा पद "अर्हं" परम तत्त्व है, और इसको जो जानते हैं वही तत्त्वज्ञ हैं—तत्त्वज्ञानी हैं।

ध्यानी योगी महापुरुप इस महातत्त्व-मंत्रका स्थिर चित्त से ध्यान करे तो फलस्वरुप आनन्द और सम्पत्ति की भूमिरुप मोक्षलक्ष्मी को प्राप्त कर लेता है।

रेफ विन्दु और कला रहित शुभाक्षर "ह" का ध्यान करते हैं, उन पुरुषों को ध्यान करते करते यही अक्षर अनक्षरता को प्राप्त हो जाता है, और फिर वोलने में नही आता सिर्फ लय लग जाती है और इसका स्वरुप व्याप्त हो जाता हो इस प्रकार से चिंतवन करे, और अभ्यास वढाता हुवा चन्द्रमा की कला जैसा सूक्ष्म आकारवाला, व सूर्य की तरह प्रकाशमान, अनाहत नाम के देवको स्फुरायमान होता हो इस तरह का ध्यान लगावे।

वाद में अनुक्रम से केश के अग्रभाग जैसा सूक्ष्म चिन्तवन करना और क्षणवार जगतको अव्यक्त ज्योतिवाला चिन्तवन कर के लक्ष से चित्त को हटाया जाय तो अलक्ष में चित्त को स्थिर करते हुवे अनुक्रम से अक्षय इद्रियों से अगोचर जैसी अनुपम ज्योति प्रगट होती है। इस प्रकार लक्ष के आलम्बन से अलक्ष भाव प्रकाशित हुवा हो तो ध्यान करने वाले को सिद्धि प्राप्त हो गई समझना चाहिये।

उपरोक्त कथनानुसार स्वर व्यंजन अक्षरों की उपयोगिता पाठकों के समझ में आ गई होगी जिस में भी आद्य व अंता क्षरका महात्म्य तो एक अजीव प्रकारका वताया है और

अनाक्षर " ह " की महिमा का भी संक्षेप से वर्णन आ गया है जो मायाबीज है और ऋषिमंडल-यंत्र में मुख्यतया इसी का ध्यान इसी में स्थापना आदि आती है. यह मायाबीज बहुत शक्तिदाता व सिद्धियों का भंडार है।

इस तरह अक्षरों की उपयोगिता बताई गई, और मंत्राक्षर-संयुताक्षर का बयान पहले आ चुका है, देवदेवियों के नाम बाबत पाठक खुद समझ सकते हैं। इस तरह इस यंत्र को व ध्यान की विधि को समझ कर उपयोग सहित सविधि आराधन किया जायगा तो परमपद को प्राप्त करानेवाला यह मंत्र है।

॥ मायाबीज ॥

मंत्र शास्त्र में ॐ को प्रणव अक्षर और ह्रीँ को मायाबीज बताया है। बीज उसीका नाम है कि जिसमें वृक्ष पैदा करने की शक्ति हो, गेहूंका बीज गेहूं पैदा करता है, और चांवल के बीज से चांवल पैदा होते हैं तदनुसार ह्रीँ को शास्त्रकारोंने बीजाक्षर बताया है, और फिर साथ ही माया नाम दिया गया इस लिये इसका स्पष्टीकरण करना आवश्यकिय है। माया अर्थात् लीला या प्रताप कुछ भी कह दीजिये जिस में पैदा करने की शक्ति है उसका नाम बीज है और फैलानेका नाम माया है।

ह्रीँ में भी एसी अनुपम शक्ति का समावेश होना चाहिये कि जिसमे स्वर व्यंजन के अक्षरों को उत्पन्न करने की शक्ति हो, और ठीक भी है क्योंकि मायाबीजका मतलब तो तब ही सिद्ध हो सकता है कि उपरोक्त कथनानुसार सिद्ध हो सके।

मायाबीज सिद्ध करने के लिये ह्रीँ का चित्र पाठकों के सामने है, इसको ध्यान देकर देख लेवें और बाद में रेखा चित्र जिसमें ह्रीँ के पांच विभाग बताये गये हैं उनको भी खूब ध्यान देकर देख लें, और आप भी इस तरह से ह्रीँ के

बीजाक्षर मात्रावान
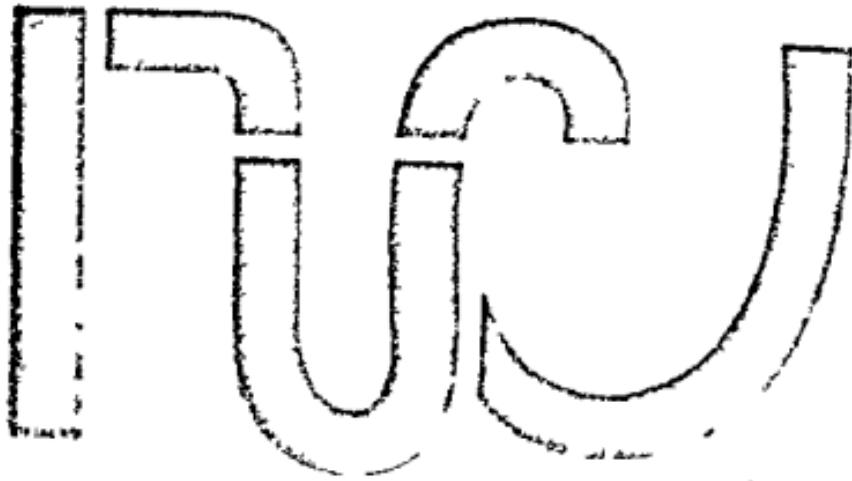
पांच विभाग मोटे बोर्ड कागज के बना लेवें और फिर निज की बुद्धिमता से इन पांचों विभागों से स्वर व्यंजन के अक्षर बनाईयेगा। प्रयत्न करने से जब इस तरह से आप स्वर व्यंजन के अक्षरों को पांचों विभागो में समावेश करना सिद्ध करलेंगे तो आपको ह्रीँ मायाबीज है इस तरह मानने में कोई संदेह नही रहेगा। जब एसा सिद्ध हो जाता है तो इस अक्षर में ज्ञान के प्रकाश का कितना समावेश है इस को पाठक खुद सोच लें और समझ लें कि शास्त्रों में मायाबीज हेतुपूर्वक ही बताया गया है जो बहुत शक्तिशाली व मोक्ष प्राप्त कराने वाला है।

इरादा तो यह था कि स्वर व्यंजन अक्षरों को ह्रीँ के अमुक भाग से बनाना इस पुस्तक में ही चित्र सहित दे दिया जाय, किन्तु एक तो मैं खुद ही इस में निष्णांत नही हूं, और दूसरे चित्रकार भी एसा नही मिला कि वह एसे चित्र जल्दी बना कर दे देवे। इस लिये पाठकों को इसका परिचय कराने के लिये रेखा चित्र दे दिया है सो देख कर समझ लेना चाहिए।

वैसे तो ह्रीँ की महिमा का पार नही है लेकिन बीज-रूप सिद्ध करने के लिये जो चित्र आप देख रहे हैं वह एक प्राचीनता का नया प्रमाण आप के सामने है जिसको ध्यान से देखियेगा। ६६४५

ऋषिमंडल

सकलीकरण

सकलीकरण अर्थात् अंग प्रतिष्ठा मंत्र का जाप करने से पहले करने की होती है जिसका विवरण इस प्रकार है।

आत्मशुद्धि मंत्र

॥ ॐ ह्रीँ नमो अरिहंताणं ॥

॥ ॐ ह्रीँ नमो सिद्धाणं ॥

॥ ॐ ह्रीँ नमो आयरियाणं ॥

॥ ॐ ह्रीँ नमो उवज्झायाणं ॥

॥ ॐ ह्रीँ नमो लोए सव्व साहूणं ॥

इस आत्मशुद्धि मंत्र का एकसौ आठ जाप कर लेना चाहिए। यह महा मंगलिक आत्मबल को बढाने वाला मंत्र है।

प्राण प्रतिष्ठा मंत्र

॥ ॐ ह्रीँ वज्राऽधिपतये आँ ह्राँ ऐं ह्रौँ श्रूँ ह्रँ क्षः ॥

प्राण प्रतिष्ठा के हेतु इस मंत्र का इक्कीस जाप कर लेना चाहिए, और बाद में इसी मंत्र द्वारा निज की चोटी (शिखा) अनेक (उत्तरासङ्ग) कंगण कुंडल अंगुठी व पूजा पाठ में

पहिनने के वस्त्र आदि को मन्त्रित कर के तमाम सामग्री को शुद्ध बना लेना चाहिए।

कवच निर्मल मंत्र

ॐ ह्रीं श्रीं वद वद वाग्वा देव्यै नमः स्वाहा ॥

इस मंत्र के जाप से कवच याने यंत्र अथवा यंत्र वाला मादलिया यदि पास में रखने को कराया हो तो इस मन्त्र द्वारा शुद्ध कर लेना चाहिए।

हस्त निर्मल मंत्र

ॐ नमो अरिहन्ताणं श्रुतदेवि प्रशस्त हस्ते हूँ फट् स्वाहा

इस मंत्रका जाप करते समय हाथों को धूप के धुँवे पर रख कर निर्मल कर लेवे।

काय शुद्धि मन्त्र

॥ ॐ णमो ॐ ह्रीं सर्वपापक्षयंकरि ज्वालासहस्रप्रज्वलिते मत्पापं जहि जहि दह दह क्षां क्षीं क्षूं क्षौं क्षः क्षीरधवले अमृतसंभवे बधान बधान हूँ फट स्वाहा ॥

इस मंत्र द्वारा शरीर को पवित्र बनाना चाहिए और साथ ही अन्तःकरण को भी निर्मल रखने का प्रयत्न करना जिस से तत्काल सिद्धि होगी।

हृदय शुद्धि मन्त्र

॥ ॐ ऋषभेण पवित्रेण पवित्रीकृत्य आत्मानं पुनीमहे स्वाहा ॥

इस मंत्र का जाप करते समय दाहिने हाथ को हृदय पर रख कर अन्तःकरण को शुद्ध बनाने की भावना रखना चाहिए। ईर्ष्या, द्वेष, कुविकल्प, क्रोध, मान, माया, और लोभ का त्याग करना झूठ नही बोलना और एसे कामों से दूर रहना चाहिए।

मुख पवित्र करण मन्त्र

॥ ॐ नमो भगवते श्रीं ह्रीं चन्द्रप्रभाय चन्द्रमहिताय चन्द्र मूर्त्तये सर्वसुखप्रदायिने स्वाहा ॥

इस मंत्र द्वारा निजके मुख कमल को पवित्र बनाना चाहिए, और गम्भीरता, सरलता, नम्रता, आदि का भाव रखना चाहिए।

चक्षु पवित्र करण मन्त्र

॥ ॐ ह्रीं श्रीं मुद्रामुद्रे कपिलशिखे हूँ फट् स्वाहाः ॥

इस मंत्र द्वारा निज के नेत्रों को पवित्र करना और नेत्रों में स्नेहभाव सरलता का प्रकाश हो एसे भाव बनाकर नेत्र पवित्र करना चाहिये।

मस्तक शुद्धि मंत्र

॥ ॐ नमो भगवती ज्ञानमूर्तिः सप्तशतक्षुल्कादि महाविद्याधिपतिः विश्वरूपिणी ह्रीँ हूँ क्षौँ क्षाँ ॐ शिरस्त्राणपवित्रीकरणं ॐ णमो अरिहन्ताणं हृदयं रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा ॥
इस मंत्रद्वारा मस्तक निर्मल करना और शुद्ध हृदयसे यथासाध्य जाप करते जाना जिससे मंत्र तत्काल सिद्ध होता है।

॥ मस्तक रक्षा मंत्र ॥

ॐ णमो सिद्धाणं हर हर त्रिशिरा रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा ॥

इस मंत्रद्वारा मस्तक रक्षाकी भावना रख बोलते समय मस्तक पर हाथ लगाना चाहिए।

॥ शिखा बन्धन मंत्र ॥

ॐ णमो आयरियाणं शिखां रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा।
इस मंत्रद्वारा शिखाको पवित्र करके, चोटीके केशों (बाल) को बांधना चाहिए, बांधते समय बालोंमें गांठ नही लगाना और यूंही लपेटकर स्थिर करदेना चाहिए।

॥ मुखरक्षा मंत्र ॥

॥ ॐ णमो उवज्झायाणं एहि एहि भगवति वज्रकवचे वज्रिणि रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा ॥

इस मंत्रको बोलते समय मुखके तमाम अवयवोंकी रक्षाके हेतु भावना भायी जाय ।

॥ इन्द्रस्य कवच मंत्र ॥

ॐ णमो लोए सव्वसाहूणं क्षिप्रं साधय साधय वज्र हस्ते शूलिनि दुष्टं रक्ष रक्ष आत्मानं रक्षरक्ष हूँ फट् स्वाहा॥

मंत्र जाप करते समये देवकृत उपद्रव अथवा अन्य भीति उपस्थित न होने के लिये भावना की जाय जिससे किसी तरहका उपद्रव न होने पावे ।

॥ परिवार रक्षा मंत्र ॥

॥ ॐ अरिहय सर्व रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा ॥

इस मन्त्रद्वारा कुटुम्ब-परिवारकी रक्षा के लिये प्रार्थना करना, जिससे मंत्रको सिद्ध करनेके समय किसीभी तरहका परिवार उपद्रव न होने पावे और मंत्रको साधन करनेका समय निर्विघ्नतासे व्यतीत हो जाय ।

॥ उपद्रव शांति मंत्र ॥

॥ ॐ ह्रीँ श्रीँ फट् स्वाहा किटि किटि घातय घातय परविघ्नान छिन्धि छिन्धि परमंत्रान् भिन्धि भिन्धि क्षः फट् स्वाहा ॥

मंत्रका जाप करते समय किसी और की तरफसे अंतराय आजाय या किसी तरहका कष्ट उत्पन्न होने वाला हो तो इस मंत्रके प्रभावसे हट जाता है, और सर्व दिशाके सारे उपद्रवोंको रोकने के लिये इस मंत्रका जाप करना चाहिए।

॥ सकली करण दूसरा ॥

ऊपर बताये अनुसार क्रिया न हो शके और ऋषिमंडल मूलमंत्रका जाप करनाही है तो जिनको ऊपर लिखी क्रियामें प्रवेश करते कठिनाई मालूम हो उनके लिये सादी क्रिया इस प्रकार बताई गई है कि नीचे बताया हुवा मंत्र बोलता जाय और अंगके अवयवका नाम आवे उस जगह निजका हाथ रखकर बोलता जाय, जब इस तरहकी क्रिया हो चुके तब मूलमंत्रका जाप शुरु कर देवे।

॥ महारक्षा सर्वोपद्रव शांतिमंत्र ॥

॥ नमो अरिहन्ताणं शिखायां ॥
॥ नमो सिद्धाणं मुखावरणे ॥
॥ नमो आयरियाणं अङ्गरक्षायां ॥
॥ नमो उवझायाणं आयुधे ॥

॥ नमो लोए सव्वसाहूणं मौर्वी ॥
॥ एसो पञ्चनमुकारो–पादतले,
वज्रशिला सव्वपावप्पणासणो ।
वज्रमयप्राकारं चतुर्दिक्षु मङ्गलाणं च,
सव्वेसिं खादिराङ्गारखातिका ॥
॥ पढमं हवई मङ्गलं परि वमोवज्रमय विधानं ॥

उपर बताया हुवा मंत्र बोलनेसे भी सकली करण हो जाता है अतः जिसको जैसा सुगम मालूम हो तदनुसार करे।

॥ सकलीकरण तीसरा ॥

एक और सकलीकरण बताया है, जो सर्व प्रकारकी ऋद्धि सिद्धि देने वाला है, और मंत्रके आद्यमें इस सकलीकरण द्वारा भी शुद्धि कर सकते हैं, जैसी जिसको सुविधा व सुगमता मालुम हो उसीको अङ्गीकार करे, मंत्र इस प्रकार है ॥

ॐ णमो अरिहन्ताणं ॐ हृदय रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा ॥
॥ ॐ णमो सिद्धाणं ह्रीं शिरो रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा ॥
॥ ॐ णमो आयरियाणं हूँ शिखां रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा ॥
॥ ॐ णमो उवज्झायाणं हूँ एहि एहि भगवति वज्रकवचे वज्रपाणि रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा ॥

॥ ॐ णमो लोए सव्वसाहूणं ह्रः । क्षिप्रं साधय साधय वज्रहस्ते शूलिनि दुष्टान् रक्ष रक्ष हुँ फट् स्वाहा ॥

॥ एसो पञ्च नमुकारो वज्रशिलाप्राकार ॥ सव्व पाव प्पणासणो वप्रो वज्रमयो मङ्गलाणं च सव्वेसिं खदिरांगार-मयो खातिका ॥

॥ पढमं हवई मङ्गलं वप्रोपरि वज्रमय पिधानं ॥

इस तरह तीसरा सकलीकरण बताया है सो साधक पुरुषको ठीक तरह समझ लेना चाहिए।

—:○:—

ऋषि मंडल आलम्बन

हर एक मंत्रको सिद्ध करनेके लिये यह नियम है कि जिस मंत्रका जो अधिष्ठाता हो उनहीका चित्र अथवा प्रतिमा आलम्बन रुप सामने रखना चाहिए। बहुधा एसा देखा जाता है कि इस विषयका ध्यान साधक वर्ग कम रखते हैं, और जहां सिद्धचक्र को आलम्बन रुप रखना चाहिए वहां यक्षको या माणिभद्रजी पद्मावती आदिको आलम्बनमें रखते हैं. देवकी जगह देवी और यक्षकी जगह देव आदि विपरीत आलम्बन रखनेसे मंत्र सिद्ध नहि होता। ऋषि मंडलके पति–अधिष्ठायक चौवीस जिनेश्वर भगवान हैं जिनकी स्थापना ह्रीँ में बताई गई है और परिकरमें देव देवियों की स्थापना जो रक्षाके हेतु व कार्य सिद्ध करनेके निमित्त की गई है, इस लिये सबसे अच्छा आलम्बन तो ऋषिमंडल यंत्र ही है और सिद्धचक्रजी का आलम्बन भी इस मंत्रके जापमें उपयोगी बताया गया है।

ऋषिमंडल यंत्र सोनेके चांदीके तांबेके कांसीके अथवा सर्व धातुके पतडे पर बना हुवा मिल जाय तो सबसे अच्छा है, और एसा न मिल सके तो ऋषिमंडल यंत्र जो इस पुस्तकके साथ दिया जा रहा है उसी को आलम्बन में रख लेवे क्यों कि इस मंत्रके जाप में जितनी तरहकी स्थापना चाहिए सारी इसमंत्रमें मौजूद है।

स्थापना करते समय ध्यान रखना चाहिए कि स्थापना निजकी नाभि से उंची रहे और उसके लिये एक बाजोट जिसे सिंहासन-पाटीया-या पाटला भी कहते हैं जो बहुत सुन्दर बना हुवा हो और नाभिके प्रमाण तक उंचा हो एसे बाजोटको शुद्ध करके उसके उपर पीले रंगका कपडा बिछा लेवे और उस पर ऋषिमंडल यंत्रको स्थापना करे।

यंत्रके दाहिनी तरफ घी का दीपक जलता रहे और बांई तरफ धूप या अगरबत्ती जलती रहे-दीपक की ज्योत ठीक प्रकाश देने वाली होना चाहिये क्यों कि इससे मंत्रशक्ति का विकास होता है।

यंत्र यदि सोने चांदी ताम्बा कांसी आदिका बना हुवा हो तो नित्य प्रति पक्षाल पूजा अष्ट-द्रव्यसे करना चाहिए, और यंत्र कपडे पर हो या कागज पर छपा हुवा या लिखा हुवा हो तो वासक्षेपसे नित्य पूजा करना और सामने चांवल नैवेद्य फल आदि चढाना चाहिए।

दीपक जलता हुवा इतना उंचा रहे कि जिसकी ज्योति ऋषि मंडल यंत्र में जो ह्रीँ है उस के मध्य भाग तक आ जावे अर्थात दीपक को ठीक उंचाई पर रखे और जो जो विधान करने के हैं वह करते जांय जिसका पूरा विवरण आगे के प्रकरणमे आवेगा।

ऋषिमंडल ध्यान विधि

यह तो प्रसिद्ध बात है कि मंत्र साधनाकी सिद्धि के लिये ध्यानभी एक मुख्य अंग है, और साधक पुरुष ध्यान क्रियामें निपुण हो तो सिद्धि प्राप्त करता सहज बात है। ध्यान करने वाले को एकाग्रताके लिये अथवा जिनका ध्यान किया जाता है उनके उपर एकनिष्ठ होनेके हेतु नेत्र कमल बंध कर ध्यान मग्न होना चाहिए। मनको साफ रखे ममता मायाका त्याग करे और समभाव आलम्बित होकर विषयादि कुविकल्पोंसे विराम पाकर सम परिणामी बना रहे तो लाभका हेतु है। जिन पुरुषोंको समभाव गुण प्राप्त नही हुवा है उन पुरुषोंको ध्यान करते समय अनेक प्रकारकी विटम्बनायें उपस्थित हो जाती हैं, और साध्य बिन्दु सिद्ध होनेमे विलम्ब हो जाता है, इस लिये ध्यानके कार्यमे प्रवेश करते समय सम परिणामी होनेका अभ्यास करना चाहिए, क्योंकि सम परिणाम आये विना वास्तविक ध्यान नही हो पाता. और विना ध्यानके निष्कम्प समता नही आ सकती इस तरह अन्योन्य कारण हैं।

साधक पुरुषको चाहिए कि समता गुणमें झुलता हुवा ध्यानका अभ्यास करे। ध्यान करते समय स्थान, शरीर,

वस्त्र, और उपकरण शुद्धिकी तरफ विशेष ध्यान रखना चाहिए, क्योंकि पवित्रतासे चित्त प्रसन्न रहता है, और साधना सिद्ध होती है। जो पुरुष हृदयको पवित्र किये विना ध्यान करते हैं उनको सिद्धि प्राप्त नही होती। एक मामूली बात है कि राजा महाराजाको अपने गृह निवासमें आमंत्रित करते हैं तो निवास स्थानको किस तरहका पवित्र व सुन्दर-स्वच्छ बनाकर सजाया जाता है और शोभा बढाने में लक्ष दिया जाता है जिसका वृत्तान्त पाठक जानते होंगे। सोचने जैसी बात है कि राजा महाराजाकी पधरामणीमे इतने दरजे लक्ष देते हैं तो त्रिलोकीनाथको हृदयमें प्रवेश करते समय हृदय-अन्तःकरण कितना निर्मल बनाना चाहिए जिसकी कल्पना पाठक स्वयं कर सकते हैं।

जाप करनेके तरीके तीन प्रकारके बताये गये हैं जिसका वर्णन " निर्वाण कलिका " नामके ग्रन्थमें श्रीमान् पादलिप्ताचार्यजी महाराजने किया है, और बताया है कि पहला जाप मानस, दूसरा जाप उपांशु और तीसरा जाप भाष्य है, इन तीन प्रकारके जापका खुलासा इस प्रकार है।

(१) मानस जाप उसको कहते हैं कि मनही में प्रसन्नता पूर्वक स्थिर चित्तसे एकाग्रता सहित लय लगाता हुवा ध्यान करता रहे। इस जापको मंत्र साधना का प्राण रुप माना गया है, इस लिये उच्चार रहित नेत्रोंको बंध कर मनही में

जाप किया करे तो अपूर्व आनन्दका अनुभव होता है, और जापकी दूसरी विधियोंसे हजार गुणा मानस जाप श्रेष्ट माना गया है। जिसके प्रतापसे वासना क्षय होती है और शान्ति तुष्टि पुष्टि व मोक्ष पद पाते हैं।

(२) दूसरा उपांशु जाप उसे कहते हैं कि दूसरा कोई पुरुष पासमें बैठा हो वह तो सुने नही लेकिन अन्तर जल्प रुप कण्ठ द्वारा या मुँह मेही जाप करता रहे। अर्थात् होठ हिलते नजर आवें लेकिन जाप मुँह मेही होता रहे, और पासमें बैठे हुवे पुरुष उच्चार को न समझ सकें। एसे जाप भी सिद्धि दाता होते हैं, और मन वश में रहता है, संसार वासनासे मूर्च्छा आती है। तप तेज वढता है, और नेत्रोंको कुछ खुले हुवे कुछ बंध सामने के आलम्वन पर स्थिरता पूर्वक रखनेसे एसा जोश आता है कि जिसके प्रभावसे किसी तरहका चेन-नशा आया हो और मस्त होकर वैठे हों एसा अनुभव होताहै, इस तरह होते होते स्थूलसे सूक्ष्म-में प्रवेश हो जाता है, और स्थिरता आ जाती है अतः इस जापका अभ्यास करना चाहिए।

तीसरा भाष्य जाप वताया गया है, जिसका वयान करते कहा कि जाप करते समय पासमें जो पुरुष हों वहभी स्पष्ट सुन सके और लय लगाता हुवा शुद्धता पूर्वक जाप करता रहे तो एसे जापमें वाक्शुद्धि होती है और आकर्षण

शक्ति बढती है। इस तरह जो पुरुष जाप करते हैं उनका मन भी स्थिर रहता है, और बोलते बोलते मंत्रमें तद्रूप हो जाते हैं, (मंत्रका आलाप-छन्द-राग सहित करना चाहिए) इस तरहके ध्यान करनेसे जिस पुरुषको वाक्शुद्धि होजाती है, उस पुरुषकी आज्ञा बहुतसे मनुष्य मानते हैं, शक्तिशाली हो जाता है और बहुत करके उस पुरुषका वचन कभी खाली नहीं जाता।

ऋषिमंडल मंत्रभेद

मंत्रके भेद भी कइ तरहके बताये हैं, इसी लिए एक ही मंत्र, शान्ति, तुष्टि, पुष्टि, क्रूर, मारण, उच्चाटन, और वशीकरण का काम देता है। मंत्र वेत्ताओंने एसो विधिका अन्यत्र बयान कर मंत्र जनता के सामने रख दिये है। एसे मंत्रोका ध्यान स्मरण किया जाता है तथापि सिद्धि प्राप्त नही होती, और सिद्धि न होनेसे मन हट जाता है, और मन हटना स्वभाविक बात है, क्यों कि साधक पुरुष कष्ट के समयमें परिश्रम, संताप, तप आदि सहन कर आराधना करते हैं, और एसे विपत्ति व कष्ट के समयमें मंत्राराधन फलीभुत न हों तो श्रद्धा हट जाना स्वभाविक बात है। मनुष्य को इतनी धैर्यता कहां होती है कि वह सिद्धि प्राप्त न होने पर भी धैर्यता से बैठ रहे, और स्मरण ध्यान करता जाय। इस विषयमें हमें तो यही प्रतीत होता है कि मंत्रभेद की जानकारी जैसी कि चाहिए नही होती और आराधना शुरु कर देवे हैं इस लिये मंत्र सिद्धि नही होती अतः पहले मंत्रभेद को जान लेना चाहिए। जब मंत्रभेद समझमें आ जाय तो साधनका मार्ग बहुत सरल व सुगम हो जाता है।

पुस्तकमें देख कर मंत्र साधना का ढंग कुछ और ही प्रकारका होता है, और गुरुगम कुछ और ही बात है अतः मंत्र शास्त्रके अनुभवी निष्णांत व्यक्ति की राय लेकर मंत्र साधनका कार्य किया जाय तो सम्भव है कि अवश्य सिद्ध हो जायगा।

मंत्रोमें प्रणवाक्षर ॐ तो तमाम मंत्रोका प्राण है. एसा कोई मंत्र नही है कि जिसमें इस प्रणवाक्षर ॐ की उपस्थिति न हो, और बहुधा एसा भी देखा गया है कि किसी किसी मंत्रमें जहां अक्षरोंकी गिनतीका प्रश्न आता है उस जगह ॐ को तो मंत्रोमें सर्वव्यापि समझकर गिनते नही हैं। जिसमें अरिहंत सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, और सर्व साधू की स्थापना है, इसी लिये ॐ जीवन रुप है।

दूसरे मंत्रोके आद्यमें ॐ आता है सो मंगलरुप है, और इसीसें मंगलाचरण होता है। अतः एसे शक्तिशाली ॐ पद को मंत्रोंका जीवनप्राण समझना चाहिए।

मंत्रोके अंतमें किसी जगह तो नमः शब्द आता है जो शांतिदायक है। मंत्र कितना ही शक्तिशाली हो किन्तु नमः शब्द लगाने से शान्तरुपवाला बन जाता है, और क्रूर मंत्र भी क्रूर नही रहता क्योंकि नमः पल्लव मंत्रको शान्त स्वभाव-वाला बना देता है। इसी तरह नमः के बजाय " फट् "

पल्लव लगाया जाय तो मंत्रकी शक्ति तेज हो जाती है, और शांति सूचक मंत्र भी तेज स्वभाव वाला बन जाता है जिससे कार्य की सिद्धि भी तत्काल होती है। नमः या कोई भी पल्लव लगा देने बाद स्वाहा लगाया जाता है सो सिद्धि-दायक है, और हर एक पल्लव की प्रकृतिका प्रकाश करने-वाला है, और मंत्रकी शक्तिमें वेग पहुंचाकर उसे तेजोमय बना देता है, अतः आराधन करने वालोंको इस विषयका पूरा ध्यान रखना चाहिए. और जैसा कार्य हो वैसा ही पल्लव लगा कर जाप करे जिससे तत्काल सिद्धि होगा।

मंत्राक्षर बोलते समय मंत्राक्षरके स्वरुप को नही बिगाडना चाहिए। जैसा अक्षर हो ह्रस्व, दीर्घ संयुताक्षर आदि का ध्यान रखकर उसके रुपमें स्पष्ट बोलना चाहिए। इस तरहसे बोलने से मंत्रशक्ति बढती है और सिद्धि भी प्राप्त होती है। अतः संयुताक्षर बोलते बोलते अपभ्रंश न हो जाय जिसका पूरा ध्यान रखना चाहिए।

ऋषिमंडल आम्ना

ऋषिमंडलमें खास बात आम्ना की है, और इसकी प्राप्तिके लिए प्रयत्न भी किया जाता है। तथापि कितनेक महानुभाव जो आम्ना जानने वाले हैं वह जानते हुवे भी बताते नही हैं, और कितनेही यूं कह देते हैं कि ऋषिमंडल स्तोत्रमें ब्यान आता है कि हरएक को यह मंत्र न बताया जाय। बात भी ठीक है जिस समय गणधर महाराजने इसकी सङ्कलनाकी उस समय पुन्यवान जीव मौजूद थे, और समय भी सुलभ था, जनता भी सरल परिणामीथी, इसी लिये सिद्धि भी हो जाती थी। जहां तत्काल सिद्धि थी उस समय किसी दुष्परिणामी जीवके हाथ यह मंत्रआ जाय और प्राप्त सिद्धिसे अनिष्ट परिणाम न आ जाय इस हेतुसे आम्ना बतानेकी आज्ञा नही दी गई हो, और साथही भय बताया गया के मिथ्यात्वी को देने से पद पद पर हिंसा के समान पाप लगता है, लेकिन इस पञ्चमकालमें तो भारी कर्मी जीव हैं। न तो पूर्वजों जैसी श्रद्धा है, न ईष्ट प्रीति है, और न सामान, सामाग्री, काल, स्वभाव है, अतः तत्काल सिद्धि प्राप्त होना बहुत कठिन बात है। तत्काल तो क्या लेकिन बहुत लम्बे समय बाद भी सिद्धि प्राप्त हो जाय तो गनीमत है। हां,

हलुकर्मी श्रद्धावंत जीवों की संसारमें कमी नही है, और एसे उत्तम जीव पुन्यानुबंधी पुन्य वालोंको सिद्धि प्राप्त होना संभवित है, तथापि ऋषिमंडल के सत्तावनमें श्लोक को बताकर इस स्तोत्रकी आम्ना नही बताना यह तो इस कालमें अनिच्छनिय है। जबके स्तोत्रयंत्र बहुत से प्रकाशित हो चुके हैं तो फिर आम्ना को गुप्त रखना बेसूद है। अतः जो आम्ना प्राप्त हुई है उसे पाठकों के सामने रखते हैं, और साथमे यह दावा भी नही करते कि इसके सिवाय और आम्ना है ही नही–होगा हमे इसमें हठवाद नही है, ज्ञानियोंका ज्ञान अनंत है। लेकिन जिस प्रकारका संग्रह कर पाये हैं उसीको पाठकों के सामने रखते हैं, पाठक ध्यान पूर्वक समझ लेवे।

(१) प्रथम तो ऋषिमंडल मूलमंत्रमें नौवें श्लोक द्वारा सत्ताइस अक्षर बताये हैं, और उसके साथ आद्यमें ॐ लगाकर मंत्र बोला जाय तो अट्ठाइस अक्षर होते हैं। लेकिन मंत्रशास्त्रमें ॐ को मंत्रोंका प्राण बताया है, और ॐ अवश्य लगाना चाहिए इसको गिनतीमें लेनेकी आवश्यकता नही है।

(२) ऋषिमंडल के मूलमंत्रका आराधन करने वालोंको अंतमें ह्रीँ लगाकर नमः पल्लव लगानेका विधान बताया गया है। नमः पल्लव शान्तिदाता है. इस नमः पल्लवका विशेष प्रकाश करनेके लिये साथ ही "स्वाहा" लगाया जाय तो

मंत्रशक्तिका वेग बढ जाता है, और मंत्रसिद्ध करने के लिये इसकी आवश्यकता है।

(४) ऋषिमंडल मूलमंत्रके साथ नमः पल्लव बताया गया है। लेकिन जब तेज स्वभावी मंत्र बनाना हो तो या एसे कार्यके लिये मंत्र आराधन किया जाता हो कि जिसको जल्दी पूरा कर सिद्ध करना है तो नमः पल्लव न लगाकर "फट्" पल्लव लगाया जाय और साथ ही "स्वाहाः" बोल कर मंत्रकी शक्तिको बढा लेना चाहिए।

(५) ऋषिमंडलके छप्पनवें श्लोक के आद्यमें "भूर्भुव" आता है, सो इसे बोलते समय ॐ लगाकर "ॐ भूर्भुव" बोलना चाहिए। इस श्लोक के आद्यमें ॐ लगाने की आदत कर लेना। इस तरह चार बातें पाठकों के सामने हैं जिनका आदर करना और विशेष विधि आगे के प्रकरण में आवेगा लेकिन समान भावसे करने वालों के लिये उपरोक्त विधान अनुकूल आ सकेगा, आगेके प्रकरण में जो विधि बताई जायगी वह कुछ कठिन है अतः जैसा जिसके समझ में आवे द्रव्यक्षेत्रकालभाव देख कर करे।

उत्तर क्रिया करनेका विधान

ऋषिमंडल पूजामंत्र

ऋषिमंडल यंत्र की पूजा करते समय नीचे बताया हुवा मंत्र बोलना चाहिए।

॥ ॐ ह्रीँ श्रीँ क्लीँ ऐँ नमः ॥

ऋषिमंडल वीशोपचार

इस मंत्र के साधन करते समय विशोपचार–अर्थात् बीस तरहकी क्रिया करना बताया है जिनके नाम इस प्रकार हैं।

(१) भूमिशुद्धि, (२) अंगन्यास, (३) सकलीकरण, (४) आत्मरक्षा, (५) हृदयशुद्धि, (४) मंत्रस्नान, (७) कल्पशदहनं, (८) करन्यास, (९) आह्वाहन, (१०) स्थापना, (११) सन्निधान, (१२) सन्निरोध, (१३) अवगंठन, (१४) छोटीका, (१५) अमृतिकरणं, (१६) पुजन, (१७) जाप, (१८) क्षोभणक्षामणा (१९) विसर्जन (२०) प्रार्थना–स्तुति।

उपरोक्त कथनानुसार बीस अधिकार करना चाहिए जिसका खुलासा इस प्रकार है॥

॥ (१) भूमिशुद्धि ॥

ॐ भूरसी भूतधात्री सर्वभूतहिते भूमि शुद्धि कुरु कुरु नमः । यावदहं पूजा करिष्ये तावं सर्वजनानां विघ्नान विनाश विनाश सिरिभव सिरिभव स्वाहा ।

इस मंत्र को बोलकर भूमिशुद्धिके लिये पृथ्वी पर वासक्षेप डालना चाहिए ।

॥ (२) अंगन्यास ॥

॥ ह्रॉं हृदय, ह्रीं कण्ठ, ह्रूं तालु, ह्रैं भ्रूमध्य, ह्रः ब्रह्मरन्ध्रेशु ॥

उपरोक्त मंत्र बोलते समय हृदय, कण्ठ, तालु आदि के हाथ लगाते जाना और क्रमवार बोलना ।

॥ (३) सकलीकरण ॥

॥ क्षि, पीतवर्ण जानुनो, प, स्फटिक वर्णनाभौ, ॐ रक्तवर्ण हृदय, स्वा, नीलवर्ण मुखे, हाः मृगमदवर्ण भाले ॥

उपर बताये अनुसार बोलते जाना और जानु, नाभि, हृदय, मुख, और भाल पर हाथ लगाते जाना बादमें उल्टा जाप इस तरह करना ।

॥ हाः मृगमदवर्णभाले, स्वा नीलवर्णमुखे, ॐ रक्तवर्ण हृदये, प स्फटिकवर्णनाभौ, क्षि पीतवर्णजानुनो इस तरह

बोलकर अंग पर हाथ लगाते हुए उतारना और तीन दफे चढाना तीन दफे उतारना इस तरह अनुक्रम से सकलीकरण पूरा कर लेवे।

॥ (४) आत्मरक्षा ॥

॥ ॐ परमेष्टि नमस्कारं मित्यनेन त्रिकार्या आत्मरक्षाः ॥
इस मंत्रको आत्मरक्षा के लिये बोलना।

॥ (५) हृदयशुद्धि ॥

॥ ॐ विमलाय विमलचित्ताय क्ष्वीँ क्ष्वीँ स्वाहा ॥
इस मंत्र को बोलकर प्रवचन मुद्रा द्वारा तीन दफा मंत्र बोल हृदयशुद्धि करना चाहिए।

॥ (६) मंत्र स्नान ॥

॥ ॐ अमलेविमलेसर्वतीर्थजले प, प, पां पां, वां, वां अशुचिशुचिर्भवामि स्वाहा ॥
इस मंत्र द्वारा पञ्चाङ्गी स्नान तीन दफा निज के हाथों से स्पर्श करता हुवा मंत्र बोलकर कर लेवे।

॥ (७) कल्पश दहनं ॥

ॐ विद्युत् स्फुलिङ्गे महाविद्ये ममसर्वकल्यशं दह दह स्वाहा ॥

॥ (८) करन्यास ॥

ॐ नमो अरिहंताणं अङ्गुष्टाभ्यां नमः
ॐ नमो सिद्धाणं तर्जिनिभ्यां नमः
ॐ नमो आयरियाणं मध्यमांभ्यां नमः
ॐ नमो उवज्झायाणं अनामिकाभ्यां नमः
ॐ नमो लोए सव्वसाहूणं कनिष्टाभ्यां नमः
ॐ सम्यक्‌दर्शनज्ञानचारित्रतपेभ्यां करतल करपृष्टाभ्यां नमः ॥

इस मंत्र द्वारा अनुक्रम से तीन दफा उङ्गलियों पर मंत्र चालना चाहिए।

इतना कर लेने बाद एक वख्त ध्यान लगा कर चितवन द्वारा गुरुमहाराज, दशदिग्पाल, नवग्रह, क्षेत्रदेवता आदिकी स्थापना करने के लिये इस प्रकार चितवन करे।

अतः परं सर्वमपि कृत्यमेकवारं भविष्यति पुनः अत्र गुरुणां दशदिग्पाल, नवग्रहगण क्षेत्रदेवता दिनां च पूजा क्रमेऽनुक्रमो प्यूह्यास्तद्यथा येन ज्ञानमदियेन भिरस्याभ्यंतरं नमः ममात्मा निम्मलीचक्रे तस्मैश्रीगुरुवेनमः। अनेन कृत्वा श्रीगौतमसुधर्मादि परंपरागत वर्तमानइष्ट धर्मदात्-सुगुरुपर्यंतावली मनसिचिंतयेत्, नमस्कृत्वा चशिरसितेषां पादुकाभ्याः स्थापनकार्या धूपोक्षेपणं च कार्यतत् ॥

॥ (९) आह्वाहन ॥

ॐ इन्द्राग्नि दंड्धर नैऋत्य पाशपाणी वायुतर शशिशुशील कणीन्द्रचन्द्राआगत्य पयमिहसानुचरा सचिह्नाः पूजाविधौ ममसदेव पुराभवन्तु ॥

इस मंत्र द्वारा दशदिग्पालका आह्वाहन करना चाहिए।

ॐ आदित्य सोम मंगल बुध गुरु शुक्रा शनैश्वरौ राहु केतु मप्रुखाःखेटा जिनपतिपुरतोवतिष्टन्तु स्वाहाः ॥

इस मंत्र द्वारा नवग्रहका आह्वाहन करना चाहिए।

पुनश्च (पुनस्त्र) भूतवली मंत्रेण धूपंधूपनियं ॐ नमो अरिहंताणं, ॐ ह्रीँ नमो आकाशगामिणं, ॐ ह्रीँ चारणाई लद्धीणं जेइमेकिन्नर किं पुरिस महोरग जखरख सपिसाय भूयसाइणीमाईणीप्पभइओ जे जिणघरनिवासिणो नियर-निलग्यािप्पवि आरणो सन्निहिया असन्निहिया तेईमे विलेवण धूप पुप्फ फलप्पईथयमिच्छंता तुठिकरा भवन्तु पुठिकराभवन्तु सिवंकराभवन्तु संतिकराभवन्तु सव्वच्छ रखं कुणंतु सव्वच्छा दुरिआणिनासंतु सव्वासिवमुवसंमंतु सव्वसुच्छयणंकारिणो भवन्तु स्वाहाः ॥

अस्य मंत्रस्यार्थं हृदि वि चिन्त्य धूपौ क्षेपणं कार्य इति, भूतवलीमंत्रोयं तदनुपुजा विधि प्रारम्भकाले तथा यदा जपं होमचारभेत् तदा अन्तरमनसं एवंवदेत् ॥

संवत् अमुकमास तिथिवारेऽहं अमुक गुरुशिष्योहं अमुकसिद्धये अमुकजपं होमं च प्रारंभे–वा करिष्ये स च श्री जिनेन्द्रचन्द्र वा मंत्राधिष्ठिदेव प्रसादेन सफलोभवः ॥

अत्र हस्तक्रियास्ति सा श्रीगुरुमुखादवसेया इति सङ्कल्प। ततः ।

ॐ नमोऽर्हपिभाय इतिपदमुचरन स कर्पूरसुगंधपुष्पै पूजा कार्या देवता व सुर पुजनं ।

इत्यादि पटेन चतुर्विंशंति जिनाः विविक्षित देव देवश्च-क्रमेण स्थापनाकार्य पट्टाद्वौ आह्वाहनं मुद्रद्रियावाहनं धेनुमुद्रया स्थापना ॥

इतनी क्रिया के बाद सङ्कल्प इस तरह करना ।

ॐ भुरिलोके जम्बूद्वीपे भरतखण्डे दक्षिणार्द्धभरते मध्य-खण्डे अमुकदेशे अमुकनगरे अमुकगृहे अमुकप्रसादे अमुक वर्षे अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकवारे नक्षत्रे एवं पञ्चाङ्ग शुद्धौ ममात्मा पुत्र मित्र कलत्र सुहृदय बन्धुवर्ग स्वजनशरीरे रोगदोग क्लेश कष्ट पीडा निवार्णार्थे शत्रुक्षयार्थ ग्रहपीडानिवार्णार्थे क्षेमार्थे श्रीप्राप्तार्थे मनोकामनासिद्धार्थ श्रीशांतिनाथ १०८ अभिषेक श्रीशांतिकर स्तवन पूजा विधि १०८ जप करिष्यामि । दशांश होमं करिष्ये सव्व श्रीमंत्राधिष्टायकदेव प्रसादेन सफलो भव ॥

इस तरह सङ्कल्प करने के बाद संवोपट मुद्रा करके मंत्र द्वारा आह्वाहन करें। संवोपट मुद्रा इस तरह करते हैं कि मुष्टि

बांध कर अंगुष्ट को तर्जनी व मध्यमा के बीच में निकाले और बादमें आह्वाहन मंत्र इस तरह बोलना।

ॐ आँ क्रौँ ह्रीँ श्रीँ भगवत शांतिनाथाय अत्र स्नात्रपीठे आगच्छत। संवोषट।

॥ (१०) स्थापना ॥

ॐ आँ क्रौँ ह्रीँ श्रीँ शान्तिनाथ अत्रपीठेतिष्ठः ठः ठः॥
इस मंत्रद्वारा स्थापना करना चाहिए।

॥ (११) सन्निधान ॥

ॐ आँ क्रौँ ह्रीँ श्रीँ भगवतः शान्तिनाथ ममसन्निहिता भवंतवषट ॥

सन्निधान करते समय मुष्टि बांध कर अंगुष्ट को उंचा रखना चाहिए।

॥ (१२) सन्निरोध ॥

ॐ आँ क्रौँ ह्रीँ श्रीँ भगवतःशान्तिनाथाय पूनांतं यावद्-मेवष्टांत्यं ॥

सन्निरोध करते समय मुष्टि बांधकर ·· को मुष्टि के · चाहिए।

॥ (१३) अवगुंठन ॥

ॐ आँ क्रौं ह्रीं श्रीं शान्तिनाथाय परेषां मिथ्यादृष्यां भवंतु स्वाहा ॥

तर्जनी उङ्गली उंची करके अवगुंठन द्वारा मंत्र बोलना चाहिए ॥

॥ (१४) छोटीका ॥

॥ विघ्न त्रासनार्थं ॥ अ आ पूर्वे इ ई दक्षिणे, उ ऊ पश्चिमे, ए ऐ उत्तरे, ओ औ आकाशे, अं अः पाताले अंगुष्ठा तर्जनी म्रुच्छाप्य ॥ इति छोटिका

॥ (१५) अमृतिकरण ॥

अमृतिकरण धेनुमुद्रा द्वारा करना चाहिए।

॥ (१६) पूजनं ॥

ॐ आँ क्रौं ह्रीं श्रीं भगवतः शान्तिनाय गंधादि गृह्नन्तु नमः ॥

इस मंत्र से भाजलीमुद्राद्वारा पूजा करना चाहिए। बाद में अन्य देवादिकों की पुजा का मंत्र बोलना।

ॐ आँ क्रौं ह्रीं श्रीं भगवतः शान्तिनाथाय जिनपदभक्ता

बांध कर अंगुष्ट को तर्जनी व मध्यमा के बीच में निकाले और बादमें आह्वाहन मंत्र इस तरह बोलना ।

ॐ आँ क्रौं ह्रीँ श्रीँ भगवत शांतिनाथाय अत्र स्नात्रपीठे आगच्छत । संवौषट ।

॥ (१०) स्थापना ॥

ॐ आँ क्रौं ह्रीँ श्रीँ शान्तिनाथ अत्रपीठेतिष्ठः ठः ठः ॥

इस मंत्रद्वारा स्थापना करना चाहिए ।

॥ (११) सन्निधान ॥

ॐ आँ क्रौं ह्रीँ श्रीँ भगवतः शान्तिनाथ ममसन्निहिता भवंतवषट ॥

सन्निधान करते समय मुष्टि बांध कर अंगुष्ट को उंचा रखना चाहिए ।

॥ (१२) सन्निरोध ॥

ॐ आँ क्रौं ह्रीँ श्रीँ भगवतःशान्तिनाथाय पूजांतं यावद्-त्रेवष्टांत्व्यं ॥

सन्निरोध करते समय मुष्टि बांधकर अंगुष्ट को मुष्टि के अन्दर रखना चाहिए ।

॥ (१३) अवगुंठन ॥

ॐ आँ क्रौं ह्रीं श्रीं शान्तिनाथाय परेषां मिथ्यादृष्ट्यां भवंतु स्वाहा ॥

तर्जनी उङ्गली उंची करके अवगुंठन द्वारा मंत्र बोलना चाहिए ॥

॥ (१४) छोटीका ॥

॥ विघ्न त्रासनार्थं ॥ अ आ पूर्वे इ ई दक्षिणे, उ ऊ पश्चिमे, ए ऐ उत्तरे, ओ औ आकाशे, अं अः पाताळे अंगुष्ठा तर्जनी मुच्छाप्य ॥ इति छोटिका

॥ (१५) अमृतिकरण ॥

अमृतिकरण धेनुमुद्रा द्वारा करना चाहिए।

॥ (१६) पूजनं ॥

ॐ आँ क्रौं ह्रीं श्रीं भगवतः शान्तिनाथ गंधादि गृहन्तर नमः ॥

इस मंत्र से माजलीमुद्राद्वारा पूजा करना चाहिए। बाद में अन्य देवादिकों की पुजा का मंत्र बोलना।

ॐ आँ क्रौं ह्रीं श्रीं भगवतः शान्तिनाथाय जिनपदभक्ता

वज्रपाणी एरावणवाहन सौधर्मेन्द्रप्रमुखा सव्वक्राश्चतुपष्टिसुरेन्द्रा ह्रीं प्रमुखाश्चतुर्विंशतिदेव्यः पूजांमतीच्छतु स्वाहा ॥

ॐ आँ क्रों ह्रीँ श्रीँ शान्तिनाथजिनपदभक्ता सर्वदेविदेवा पूजांमतीच्छतु स्वाहाः ॥

इन मंत्रोद्धारा सर्व देव देवकी पूजा वासकपूरादि से अञ्जलीमुद्राद्धारा करना चाहिए। प्रथम जिनभगवान की पूजा करना, बाद में, अधिष्टायक देवदेवीयों की पूजा करना और फिर अष्ट प्रकारी पूजा की सामग्री नैवेद्य आदि चढा कर होम-तर्पण करके आरती उतारना, चैत्यवन्दन करना, शान्ति-फलश करना और ब्रह्मशान्ति बोलना।

(१७) वें जाप कर ही लिया और अट्ठारहवें क्षोभण-क्षामणां अञ्जलीमुद्रा से करना (१९) वें निसर्जन अस्तमुद्रा अर्थात् मुष्टिको बंधकर तर्जनी व मध्यमा उङ्गली को बाहर नीकाल साथ ही पृथ्वी की तरफ रखने से अस्तमुद्राहोती-है जिससे विसर्जन कर (२०) वें प्रार्थना स्तुतिमें.

आज्ञाहीनं क्रियाहीनं, मंत्रहीनं च यात्कृतं ॥
स तत्सर्वं कृपया देव ! क्षमस्य परमेश्वर ॥१॥

उपरका श्लोक बोल कर समाप्त करना।

ऋषिमंडल पूजा

सोलह नम्बरके विशोपचारमें पूजा करना बताया है किन्तु अष्ट द्रव्यादि पूजाका विशेष वर्णन नहीं किया गया सो यहां बताया जाता है।

ऋषिमंडलकी उत्तर क्रियाके दिन इस प्रकार मंत्र बोलकर दिनचर्या व ऋषिमंडल पूजा हवनमंडपमें करना चाहिए।

(१) दातण करते समय "ॐ ह्रीँ यक्षाधिपतये नमः॥ (२) मुख धोने के समय "ॐ ह्रीँ श्रीँ क्लीँ कामदेवाधिपति ममाभिषितं पूरय पूरय स्वाहाः॥ (३) जलमंत्र "ॐ ह्रीँ अमृतेश्वर्ये अमृतवर्षिणी स्वाहाः॥ (४) स्नानमंत्र "ॐ ह्रीँ विमलेश्वर्ये नमः (५) भूमि शुद्धिमंत्र "ॐ ह्रा ह्रीँ भूः स्वाहाः॥ (६) क्षेत्रपालमंत्र "ॐ ह्रीँ क्ष्वँ क्षेत्रपालाय नमः॥ (७) दिग्पाल मंत्र "ॐ ह्रीँ दिग्पालेभ्यो नमः॥ (८) ग्रहमंत्र "ॐ ह्रीँ ग्रहेभ्यो नमः॥ (९) देवीमंत्र "ॐ ह्रीँ षोडशमहादेव्यै नमः॥ इसके बाद सकलीकरण इस प्रकार करना चाहिए।

ॐ ह्रीँ नमो अरिहंताणं ह्राँ शीर्षं रक्ष रक्ष स्वाहाः

ॐ ह्रीँ सिद्धाणं ह्रीँ वदनं, आयरियाणं पदांग हूँ हृदय-

न्यास, उवज्झायाणं हैं नाभिं, नमो लोए सव्वसाहूणं ह्रौं पादौ, ॐ ह्रीं नमो ज्ञानदर्शन चारित्रान ह्रः सर्वांगं रक्ष रक्ष स्वाहाः

करन्यास

ॐ ह्रीं अर्हं अंगुष्ठांभ्यां नमः, ॐ ह्रीं अर्हंसिद्धा तर्जनिभ्यां नमः, ॐ ह्रीं अर्हं आचार्या मध्यमाभ्यां नमः ॐ ह्रीं अर्हं उपाध्याया अनामिकाभ्यां नमः ॐ ह्रीं अर्हं सर्वसाधवा कनिष्ठकाभ्यां नमः ॐ ह्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः धर्मकरतलकर पृष्टाभ्यां नमः ॥

इस तरह करन्यास करके ऋषिमंडल स्तोत्र बोलकर पुष्पाञ्जली क्षेपन करना।

आव्हाहन

ॐ ह्रीं ऋषभ अजित संभव अभिनन्दन सुमति पद्मप्रभ सुपार्श्व चन्द्रप्रभ सुविधि शीतल श्रेयांस वासुपुज्य विमल अनंत धर्म शांति कुंथु अर मल्लि मुनिसुव्रत नमि नेमि पार्श्व वर्द्धमानांता तीर्थङ्कर परमदेवा तस्याधिष्टायकादेवा अत्रागच्छगच्छ अवतरय स्वाहाः ॥

इस मंत्रको बोलकर पुष्पाञ्जली प्रक्षेप करके आव्हाहन करना चाहिए।

स्थापना

ॐ ह्रीँ ऋपभ० (२४) तीर्थंकर परमदेवा वस्याधिष्टाय-कादेवा अत्र तिष्ठ ठः ठः स्वाहाः ॥

॥ सन्निहीकरमंत्र ॥

ॐ ह्रीँ ऋपभ० (२४) वर्द्धमानांता तीर्थङ्कर परमदेवा वस्याधिष्टायकादेवा अत्र मम सन्निहिता भववपट ॥

इस मंत्रको बोलकर तीर्थङ्करोकी स्थापना व यंत्रमें जो स्थापना है उनकी अष्ट द्रव्यसे पूजा करना, और मत्येक पूजा का श्लोक बोलकर (पूजा के श्लोक अष्टमकारी पूजामे से बोलना) मत्येक श्लोक के बाद बोलनेके मंत्र इस तरह हैं ;

(जल) ॐ ह्रीँ ऋपभ वर्द्धमानेभ्योस्तीर्थङ्कर परमदेवोभ्य जलं चर्चयामिति स्वाहाः ॥ (चंदन) ॐ ह्रीँ ऋपभ वर्द्धमाने-भ्योस्तिर्थङ्कर परमदेवोभ्य गंधय चर्चयामिति स्वाहा ॥ (पुष्प) ॐ ह्रीँ ऋपभ० वर्द्धमानेभ्योस्तिर्थङ्कर परमदेवेभ्यो पुष्पं चर्चयामिति स्वाहाः (अक्षत) ॐ ह्रीँ ऋपभ० वर्द्धमानेभ्यो-स्तिर्थङ्कर परमदेवेभ्यो अक्षतं चर्चयामिति स्वाहा ॥

॥ उत्तर क्रिया विधि ॥

ऋपिमंडल मंत्रका ध्यान करने के बाद उत्तर क्रिया करने के लिये जो विधि बताई गई है जिसका विवरण इस मुवाफिक है ॥

वैसे तो किसी कार्य के निमित्त मूल मंत्रका जाप आठ हजार करना बताया है, और कोई साडेवारह हजार करते हैं कोई सवा लाख जाप करते हैं। कितने भी करो लेकिन उत्तर क्रिया सबको करना चाहिए। उत्तर क्रियामें दशांश अथवा पोडांश जाप हवन करके करना चाहिए। एसे हवन का शुभ दिन लेकर एक चोकोर मंडप बनावे जिसको ध्वजा पताका व मंगलिक वस्तुओंसे सुशोभित करे और मडपमें कोई अन्य पुरुप न आ सके एसी व्यवस्था करे जिस मंडपको हवन करने के निमित्त बनाया जाय वह न तो बहुत बडा होना चाहिए और न छोटा होना चाहिए द्रव्य क्षेत्र अनुसार मंडप बनवाकर उसके ठीक मध्यमें हवन कुंड बनवाया जावे। हवन कुंडमें मिट्टीकी इटें जो कची अर्थात विना पकाई हुई हो काममें लेवे।

हवनकुंड चौकोर लगभग एक हाथ लम्बा चौडा बनवाया जाय और सारे मंडप को शुद्ध बनाकर उसमे दस

दिग्पाल नवग्रह क्षेत्रदेवता आदिकी स्थापना करने के लिये जगह तजवीज कर लेवे। दूसरी तरफ चौवीस जिन भगवान की स्थापना, षोडस देवी स्थापना, अथवा चौवीस जिन भगवानकी अधिष्टायक देवियां, या यक्षकी स्थापना कर लेवे। एक जगह सिद्धचक्रजी की स्थापना करले। चारों कोनोमें चार चंवरी पांच पांच मिट्टी के वरतनकी जिसमे नीचे वडा वरतन उसके उपर छोटा वरतन अनुक्रमसे रख उपर वीजोरा रखे या श्रीफल रखकर चुंदड–अथवा लाल कपडा एक हाथ सवा हाथका लंवा चोडा उसके उपर आच्छादित करे लच्छेसे (नाडाछडी) वांधकर उपर चंदन कुम्कुम पुष्प अक्षत डाल देवे।

जव इस तरहकी तैयारी हो जाय तो स्थापना करते समय जिनदेव देवियोंकी मूर्त्ति–छवी–चित्र न हो उनकी स्थापना एक वाजोट पर दश दिग्पाल, एक पर नवग्रह आदि अनुक्रमसे करे और कुम्कुमका साथिया कर सुपारी चांवल या श्रीफल प्रत्येक स्थापनाके लिये रखे। कुम्भस्थापना पहले करके उसके पास घी का दीपक अखंड ज्योतसे रखना चाहिए।

जव इस तरहकी तैयारी हो जाय तो हवनकी सामग्रीके लिये सूखा मेवा वादाम पिशता दाख चिरोंजी व शक्कर घीरत और थोडा कपूर मिलाकर एक तांवेके नये वरतनमें रख लेवे और आसन पर सुखासन लगाकर शांति तुष्टि पुष्टि के लिये पूर्वकी तरफ मुख रखकर वैठे और साथमें किसी पुरुषको

आहुति देनेके लिये बैठना चाहिए। क्योंकि हरएक मंत्र साधनामें साधकके पास सिद्धकी आवश्यकता होती है। हवनके लिये लकडी पलास जिसको खांखरा भी कहते हैं उत्तम मानी गई है, और वैसे तो पींपलकी खेजडेकी चंदनकी, लालचंदनकी, और आरणी की लकडी भी लेना बताया है। लकडी सूखी और जीवात रहित होना चाहिए। साधना शांति तुष्टि पुष्टि के हेतु है तो नौ अंगुल लंबे लकडी के टुकडे होना चाहिए। यदि आकर्षण आदि के लिये है तो बारह अंगुल लंबे टुकडे लेना चाहिए। और लकडीके टुकडे एकसौ आठसे ज्यादे न होना चाहिए। जब सब प्रकार की सामग्री तैयार हो जाय, बाद में अष्ट द्रव्य से हवन कुंडको पुज कर अग्नि को पूजना और कपूर को आग से या दीयेकी ज्योति से सलगा कर हवनकुंड में रखना चाहिए।

मंत्र साधना के लिये विशेषचार क्रिया जिस में स्थापना आदि आ जाती है जिसका विवरण पहले बता दिया है। उस प्रकार सारा विधान करके मंत्रकी एक माला फेर कर बादमें जितनी आहुति देना हो मनमें तो मंत्र बोले और आहुति देते समय जितने पुरुष इस क्रिया में बैठे हों वह सब एक साथ स्वाहाः शब्द बोल कर आहुति देवे। आहुति चाटली या चम्मच आदि से न देवे और उपर से वस्तु डालते हों इस तरह से भी न देवे लेकिन अर्पण करते हों इस प्रकार आहुति देवे